पढ़ना सीखना और पुस्तकालय

(प्राथमिक शालाओं के शिक्षकों के लिए एक प्रशिक्षण संदर्शिका)

जिला प्रशिक्षण संस्थान पेण्ड्रा

पढ़ना सीखना और पुस्तकालय

(प्राथमिक शालाओं के शिक्षकों के लिए एक प्रशिक्षण संदर्शिका)

ज़िला प्रशिक्षण संस्थान, पेण्ड्रा,

पढ़ना सीखना और पुस्तकालय
(प्राथमिक शालाओं के शिक्षकों के लिए एक प्रशिक्षण संदर्शिका)

संरक्षक

संजय कुमार ओझा, संचालक, एस.सी.ई.आर.टी, रायपुर

मार्गदर्शन

श्रीमति मीता मुखर्जी, प्राचार्य, श्री आर.एस प्रजापति, उपप्राचार्य,
श्री एम.पी शर्मा, व्याख्याता (सभी डायट पेण्ड्रा)
सुश्री अंजलि नरोना, एकलव्य, भोपाल

संकलन व लेखन

श्री सत्यपाल जायसवाल, श्री मनोज कुमार रोहणी, श्रीमति दुर्गेश नन्दनी शर्मा, कु. लक्ष्मी सोनी, रेखा सोनी, पवन कुमार दुबे, डा. रेणुका दुबे, सन्दीप दुबे, विपिन अग्रहरि,
एकलव्य से शोभा चौबे, चन्द्रप्रकाश कड़ा, अरविन्द जैन, चन्दन यादव

सम्पादन व सहयोग

अरविन्द जैन, चन्दन यांदव, वीणा भाटिया, राकेश खत्री, ब्रजेश सिंह, कमलेश यादव

प्रकाशकः ज़िला प्रशिक्षण संस्थान, पेण्ड्रा, जिला बिलासपुर, छत्तीसगढ़

प्रतियां : 500/जनवरी 2016

इस माड्यूल में हमने निम्नांकित किताबों/पत्रिकाओं से साभार सामग्री ली हैः–

- पढने की समझ और लिखने की शुरुआत एक संवाद (प्रकाशक एनसीईआरटी)
- पढ़ना सीखने में किताबों का महत्व (प्रकाशक एकलव्य)
- शैक्षणिक सन्दर्भ (द्विमासिक पत्रिका प्रकाशक एकलव्य, भोपाल)
- एच.एम माडयूल म.प्र

मुद्रकः वेव प्रिंट, प्रा.लि. भोपाल फोनः 0755 – 4004977

भूमिका

पढ़ना सीखना और पुस्तकालय

इस बात से सभी सहमत होंगे कि पाठ्यपुस्तक के अलावा अन्य किताबें भी बच्चों के पढ़ने के लिए उपलब्ध होनी चाहिए। इससे ऐसी अन्य संभावनाएं भी खुलती हैं जो सिर्फ पाठ्यपुस्तक से संभव नहीं है। उदाहरण के लिए पांचवी में पहुंचने तक भी बहुत से बच्चे पढ़ना नहीं सीख पाते। वे पढ़ना सीखने के विविध स्तरों पर होते हैं। पाठ्यपुस्तक के अलावा अन्य किताबें उपलब्ध कराते समय बच्चों के स्तरानुसार किताबें ली जा सकती हैं। शाला में एक जीवन्त पुस्तकालय की उपस्थिति बच्चों की इस आवश्यकता को पूरा कर सकती है। दूसरा पुस्तकालय से बच्चों को परम्परागत कक्षाओं से हटकर एक खुली जगहं मिलती है। जिसमें वे उन्मुक्त होकर समझ व सीख पाते हैं।

यह माडयूल पुस्तकालय की मदद से पढ़ने लिखने की क्षमताओं के विकास के लिए समझ बनाने तथा तरीके सुझाने के लिए है। यहां यह जान लेना उचित होगा कि हम किसी ऐसे पुस्तकालय की बात नहीं कर रहे हैं जिसमें किताबें अलमारी में बन्द हों, या जिसे संचालित होने के लिए अलग कक्ष की जरूरत हो। बल्कि ऐसे पुस्तकालय की बात कर रहे हैं जिसमें किताबें बच्चों की पहुंच में हों, वे उन्हें उलट पलटकर देख सकें। अच्छा होगा कि पढ़ने के लिए घर भी ले जा सकें।

माडयूल को विकसित करते समय इस बात का ध्यान रखा गया है कि इसके माध्यम से प्रशिक्षित होने वाले शिक्षकों में पुस्तकालय के सभी पक्षों की जरूरी समझ विकसित हो सके। चूंकि पुस्तकालय का उद्देश्य बच्चों में पढ़ने लिखने की क्षमता का विकास करना है, इसलिए इस माडयूल में पढ़ने–लिखने की समझ बनाने पर खास ध्यान दिया गया है।

पढ़ना क्या है?

इस माडयूल से प्रशिक्षित शिक्षक यह जान सकेंगे कि पढ़ना सिर्फ अक्षर व मात्रा संकेत के नाम और उनकी ध्वनि को जानना नहीं है। हम यह देख चुके हैं कि पढ़ना सीखने की इस समझ के कारण बच्चे महीनों तक ककहरा रटते रहने की निरर्थक कवायद करते रहते हैं।

दरअसल पढ़ना लिखित सामग्री से अर्थ बूझने की प्रक्रिया है। ये ऐसा कौशल है जिसमें अनुमान लगाना, विषय व सन्दर्भ को समझना और मौखिक भाषा क्षमता में निहित पाठक का पूर्वज्ञान व अनुभव शामिल है। पढ़ना सीखने में पुस्तकालय का उपयोग करने के लिए पढ़ने की इस समझ को जानना आवश्यक है।

इससे शिक्षकों में किताबों को गहराई से समझने और पढ़ने के स्तरानुसार वर्गीकृत करने का नजरिया विकसित होगा। वे पढ़ना लिखना सीखने की विभिन्नि गतिविधियों को खुद करके देखेंगे, इससे उनमें जरूरत के अनुसार किताबों के साथ की जाने वाली गतिविधियां खुद सोचने का कौशल विकसित होगा।

माडयूल के माध्यम से शिक्षक जान सकेंगे कि पढ़ने की तरह ही, लिखना भी कोई एकाकी कौशल नहीं है। इसका मौखिक भाषा और पढ़ने से गहरा सम्बंध है। कुल मिलाकर इस माडयूल से पढ़ने–लिखने के बारे में व्यापक समझ विकसित हो सकेगी।

सीखने की संस्कृति

नया सीखने के लिए आवश्यक है कि सीखने वाले को अपने अनुभवों को रखने का मौका मिले, वो दूसरों के विचारों को सुने तथा अपने विचारों पर मनन और पुनर्चिन्तन कर पाए। इसके लिए एक ऐसे वातावरण की जरूरत है जिसमें सबको सहजता हो, वे स्वतंत्रता और बराबरी का अनुभव कर सकें। प्रस्तुत माडयूल में काम करने के तरीके में इन मूल्यों को गूंथा गया है। इसमें भागीदारों को अपनी बात करने, छोटे समूहों में मिलकर काम करने, पढ़ते हुए नए विचारों को जानने और उन पर अपनी राय देने के मौके रखे गए हैं। इसे हम सीखने की रचनावादी संस्कृति कह सकते हैं।

अपेक्षा है कि प्रशिक्षण के दौरान सीखने की इस संस्कृति का प्रभाव स्कूल की कक्षाओं तक भी पहुंच सकेगा।

प्रशिक्षण की विधा

अगर शिक्षा का एक अहम मकसद अपने विचार स्वविवेक से विकसित करने व जरूरत पड़ने पर उन्हें स्वविवेक से बदलने वाले इंसान तैयार होना है तो प्रशिक्षण की विधा को ऐसा होना पड़ेगा जिसमें व्यक्ति को अपने विचारों, मान्यताओं पर पुनर्विचार करने के मौके बार–बार मिलें। इसके साथ ही उनमें क्या संशोधन या बदलाव किए जाने की जरूरत है इसे पहचानने के मौके मिलें। और यह काम बगैर किसी मान अपमान के किया जाए। यह प्रक्रिया संभव हो सके इसके लिए प्रशिक्षण विधा में इसकी गुंजाइश बनानी होगी कि प्रशिक्षण में शामिल प्रतिभागियों को व्यक्तिगत रूप से व साथी प्रतिभागियों के साथ मिलकर अपने खुद के व पूरे समूह के विचारों व मान्यताओं पर पुनर्विचार करने के मौके मिलें। अतः ऐसे प्रशिक्षणों में काम करने के लिए यह जरूरी हो जाता है कि व्यक्ति को अकेले काम करने का मौका भी मिले और साथ मिलकर काम करने का भी। इसके लिए समस्या की विवेचना करना, नए नज़रिए व अनुभवों सम्बंधी आलेख पढ़ना उन पर चिंतन–पुनर्चिंतन का काम करना व उन्हें अपने यथार्थ के साथ जोड़कर देखने का काम करना जैसी कोशिशें की जा सकती है। यह काम जरूरत अनुसार व्यक्तिगत रूप से, उपसमूह बना कर तथा बड़े समूह में किया जा सकता है।

उक्त सभी तरीकों में काम करते वक्त वर्तमान विचारों व मान्यताओं को सामने लाने, उन पर वाजिब सवाल खड़े करने व उन सवालों पर चर्चा करते हुए नए निर्णय लेने की प्रक्रिया लगातार चलानी होती है। इसके साथ ही जो महत्वपूर्ण बात है वह यह कि शिक्षा में मूल्य कभी भी व किसी भी स्तर पर पीछा नहीं छोड़ते। यानी यह सवाल लगातार साथ–साथ चलता रहता है कि यह सब काम हम किन मूल्यों का निर्वाह करते हुए करते हैं? अगर हम बराबरी व स्वतंत्रता जैसे संवैधानिक मूल्यों का निर्वाह करते हुए काम करना चाहते हैं तो फिर हमारी विधा के अंतर्गत चलने वाले सभी कामों में ये मूल्य गुंथे या अंतर्निहित होने पड़ेंगे। इसे एक उदाहरण से समझने की कोशिश करते हैं– अगर हम सवाल उठाने को उचित मानते हैं तो इसकी स्वतंत्रता प्रतिभागियों को भी देनी होगी। और फिर वह सवाल प्रशिक्षक के समय पालन से लेकर उसके काम करने के तरीके तक सब पर उठाया जा सकता है और इसकी गुंजाइश बनानी होगी कि उठे सवालों को दबाया ना जाए बल्कि उनके तर्क सम्मत या यथेष्ट जवाब देने की कोशिश की जाए और जरूरत पड़ने पर अपनी गलती मानने व अपनी अनभिज्ञता को स्वीकारने से भी प्रशिक्षक ना झिझके। इस तरह देखने पर यह प्रशिक्षण एक हद तक शिक्षक शिक्षण के काम में बदलता नज़र आता है और इसका ऐसा होना इसकी जरूरत है।

इसके लिए कई प्रशिक्षणों की जरूरत होगी और दरअसल प्रशिक्षण तो किसी विचार की शुरुआत भर कर पाते हैं उसकी असली कर्मभूमि तो विद्यालय होता है। यही वह जगह है जहां जाकर इन विचारों को आजमाना होता है। और यह निश्चित है कि किसी विचार को जब कर्म की शक्ल दी जाती है यानी उस पर जब काम किया जाता है तो उसमें दिक्कतें आती हैं। अतः प्रशिक्षण के बाद अपने विद्यालय मे जाकर काम करके देखना व आई दिक्कतों को चिन्हांकित करके फिर से अगले प्रशिक्षण में आना व पुनर्विचार करना। यह एक क्रम हो सकता है। साथ ही आने वाली दिक्कतों के समाधान के लिए उचित व्यवस्था की भी जरूरत होती है। यह व्यवस्था हम मददगार ढांचा विकसित करके बना सकते हैं। इस व्यवस्था में ऑनसाइट सपोर्ट के लिए सक्षम तंत्र विकसित करना, व एक समर्थ व संवेदनशील वातावरण बनाने का काम किया जा सकता है।

प्रशिक्षक की भूमिका

हम जैसे ही प्रशिक्षण विधा को इस व्यापक रूप में परिभाषित करने लगते हैं हमारे सामने तुरंत ही प्रशिक्षक की छवि भी ऐसे व्यक्ति के तौर पर बनने लगती है जो उपरोक्त को करने में मददगार हो। इस तरह हम प्रशिक्षक की भूमिका निभाने वाले व्यक्ति में निम्नलिखित क्षमताओं व कौशलों की जरूरत महसूस करने लगते हैं–

- प्रशिक्षक समूह के साथ काम करने में सक्षम हो।
- प्रशिक्षक में सुनने का धैर्य हो।

- अपनी बात को अपने पसंद या स्थिति की सत्ता के आधार पर स्थापित करने के बजाए तार्किक ढंग से (उस बात में निहित तर्क के आधार पर) समझाने में सक्षम हो।
- व्यक्ति या समूह के विचारों, मान्यताओं में निहित द्वंद्व को पहचानकर उसे उभारने व एक समस्या के रूप में व्यक्ति व समूह के सामने रख पाने में कुशल हो।
- उभरे द्वंद्व पर अपना कोई निर्णय देने के बजाए उस समूह में बहस करवाने में सक्षम हो।
- सभी मुद्दों पर ऊपरी सहमति बनाने के बजाए बची रह गई असहमतियों को जगह देने में कुशल हो।
- अकादमिक समस्याओं को पहचानने में कुशल हों।
- विषय संबंधी ज्ञान पर व्यापक व गहरी पकड़ हो।
- विषय संबंधी ज्ञान को दूसरों को सिखाने के तरीकों पर भी अच्छी पकड़ हो।
- गलती व अनभिज्ञता को स्वीकार करने में झिझक ना हो।

तैयारी

प्रशिक्षक को प्रशिक्षण के लिए जो तैयारी करनी होगी उसके दो पहलू होंगे–

- किसी खास प्रशिक्षण के लिए की जाने वाली तैयारी
- सतत चलने वाली तैयारी

दोनों ही पहलुओं पर ध्यान दिए जाने की जरूरत होगी। किसी खास वक्त में अगर कोई प्रशिक्षण किया जाना है तो उसकी एक समग्र व सत्रवार योजना बनाकर तैयारी करनी होगी। इसके भी दो पहलू होंगे–

- पहला समग्र योजना बनाना
- समग्र योजना के आधार पर हर रोज शाम में अगले दिन की योजना बनाना

समग्र योजना बनाते वक्त पूरे प्रशिक्षण के लिए जरूरी आलेख व अन्य पाठ्य सामग्री को जुटाना व किन्हीं खास सत्रों के संबंध में की जाने वाली अकादमिक तैयारी करने की जरूरत होगी। वहीं बतौर प्रशिक्षक अपने विकास के लिए अपने विषय संबंधी ज्ञान व शैक्षणिक क्षेत्र में विकसित हो रहे ज्ञान से खुद को लगातार जोड़े रखने की जरूरत होगी जो एक सतत् चलने वाली प्रक्रिया है।

समीक्षा बैठक :

हर प्रशिक्षण में दिन भर चले काम की समीक्षा किया जाना जरूरी होता है। ताकि इस बात पर विचार किया जा सके कि दिन भर काम किस तरह चला साथ ही दिन में हुए काम के आधार पर अगले दिन

की योजना बनाई जा सके। समीक्षा बैठक में सभी प्रशिक्षक मौजूद हों व निम्न बिन्दुओं के आधार पर दिन भर के काम की समीक्षा करें –

- दिन भर के लिए जितनी योजना बनाई थी उतना काम हुआ या नहीं?
- पूरा काम योजनानुसार चला या कुछ बदलाव हुआ?
- बदलाव करने के कारण क्या थे। और क्या वे उचित थे?
- किसी सत्र में चले काम में कोई कमी रही हो तो उसे बताना व उसके कारणों पर चर्चा करना।

समीक्षा बैठक में जब समीक्षा का काम पूरा हो जाए तो समग्र योजना के आधार पर अगले दिन की योजना बनाने व उसके लिए जरूरी तैयारी करने का काम किया जाए। यदि पिछले दिन की योजना का कोई काम छूट गया हो तो उसे कब व कहां करना है इस पर विचार करने व अगर अगले दिन करना है तो उसे अगले दिन की योजना में शामिल करने का काम किया जाए।

नीचे इस प्रशिक्षण में जिन विषयों पर काम किया जाना है उनके नाम लिखे हैं तथा हर विषय को कितने सत्र का समय दिया जा सकता है वह लिखा है। उदाहरण के लिये यहॉ हम पांच दिवस की समय सारणी दे रहे हैं। प्रशिक्षक इसे आधार बनाकर अपनी सुविधा अनुसार सत्रों में परिवर्तन कर सकते हैं। लेकिन कार्य योजना इस प्रकार हो जो कि सभी उद्‌देश्यों को पूर्ण करती हो। प्रशिक्षण में सत्रों का विभाजन इस प्रकार किया गया है – परिचय – एक सत्र, बातचीत – एक सत्र, पढ़ने को लेकर – पांच सत्र , पुस्तकालय – पांच सत्र, लेखन – छह सत्र , पुस्तकालय प्रबन्धन – एक सत्र ।

पांच दिवसीय प्रशिक्षण योजनाः

दिन	पहला सत्र 10.30 से 12.00 बजे	दूसरा सत्र 12.15 से 2 बजे	तीसरा सत्र 2.30 से 3.30 बजे	चौथा सत्र 3.30 से 5 बजे
पहला दिन	परिचय करना नियम बनाना सामग्री– कागज, पेन, गेन्द	(पठन – बात (बच्चे की भाषा और अध्यापक से) बातचीत – तस्वीरों पर चर्चा, मौखिक भाषा के खेल	पढ़ना क्या है पर चर्चा और अन्य गतिविधियॉ	पठन - पढना सिखाने की शुरुआत (पढ़ने की समझ से) चर्चा

दूसरा दिन	अ प्रतिवेदन पढ़ना और उसके मुख्य बिन्दुओं पर चर्चा करना । ब पढ़ना सीखने में पुस्तकालय की भूमिका के साथ गतिविधियाँ कविता पोस्टर एवं कविता पट्टी के साथ काम और अन्य गतिविधियाँ	अ पठन – साहित्य और पढ़ना सीखना के इर्द – गिर्द लेख पढ़ना और उसपर चर्चा करना।	स्तर अनुसार किताबों का चयन पठन – किताबें करती है बातें लेख पढ़ना।	अ. गतिविधि – चार छोटे समूह में एक – एक किताब देकर किताब का रिव्यू व प्रस्तुतिकरण करना। ब.पुस्तकालय के अर्न्तगत की जाने वाली प्रमुख छोटी गतिविधियाँ
तीसरा दिन	अ प्रतिवेदन पढ़ना और उसके मुख्य बिन्दुओ पर चर्चा करना। ब स्तर अनुसार किताबों का चयन करना।	चयनित किताबों की प्रस्तुति इन बिन्दुओ के आधार पर करना 1 सक्षेंप में कहानी बताये 2 किताब को किन आधारो पर चुना 3 इसके द्वारा क्या गतिविधि की जा सकती हैं।	कहानी सुनाने की जरुरत (कृष्ण कुमार का लेख) इस पर चर्चा । कहानी के विभिन्न आयामो पर बातचीत ।	कहानी पर अभिनय करना और नॉन फिक्शन किताबों के साथ काम
चौथा दिन	अ प्रतिवेदन पढ़ना और उसके मुख्य बिन्दुओ पर चर्चा करना। ब पठन – पढ.ने लिखने का सम्बन्ध (पढ़ने की समझ	अ घटनात्मक चित्र देखकर शब्द/वाक्य लिखना ब पॉच छह शब्दों से एक सार्थक अनुच्छेद बनाना	स्वयं के अनुभव लिखना और उनका प्रस्तुतिकरण करना और उस पर चर्चा करना।	लिखने की शुरुआत से लेख "बच्चों का चित्र लेखन " पढ़ना और उस पर चर्चा करना।

	से) इस पर चर्चा करना। गतिविधि : गाय ओ गाय			
पांचवा दिन	अ प्रतिवेदन पढ़ना और उसके मुख्य बिन्दुओ पर चर्चा करना। लिखने की शुरुआत किताब से "कक्षा एक और दो में लेखन – एक दृष्टिकोण" लेख पढ़ना और उस पर चर्चा करना।	दीवार अखबार के महत्व पर बातचीत और दीवार अखबार बनाना।	दीवार अखबार बनाना और प्रस्तुतिकरण करना।	पुस्तकालय प्रबन्धन और आगे की कार्ययोजना पर काम करना।

नोटः प्रतिदिन चाय 12.00 से 12.15 बजे और भोजन अवकाश 1.30 से 2.30बजे तक रहेगा।

पहला दिन

सत्र – एक

परिचय करना व नियम बनाना

परिचय करना

प्रस्तावनाः चूंकि यह शुरूआती सत्र है अतः इस सत्र में यह कोशिश होगी कि सभी सहभागी एक दूसरे के बारे में बेहतर तरीके से जान पाये। पूरे प्रशिक्षण में अपनी बात स्वतत्रंता पूर्वक रखें और उनकी भागीदारी ज्यादा से ज्यादा हो। साथ ही इस प्रशिक्षण से प्रतिभागियों की क्या अपेक्षाएं है जानना जिससे उनकी अपेक्षा अनुसार प्रशिक्षण में कार्य हो सके । इसके लिये कुछ गतिविधियां भी रखी गयी है। सभी साथियों से यह अपेक्षा होगी कि वे इन गतिविधियों को आगे के सत्र में जहां आवश्यकता हो उपयोग करेंगे।

सामग्री :कागज की पर्चियां जिन पर जोड़े वाले शब्द लिखे होंगे जैसे जूते, मौजे, चिड़िया, घोंसला आदि तथा बोर्ड, मार्कर/चॉक, कार्डशीट।

काम करने का तरीका/चरण

नोट –परिचय के लिए दी गई निम्न दो में से कोई एक या दोनों गतिविधि करनी है।

गतिविधि:1

> उपरोक्त गतिविधियों को करते हुए जोड़ी बनाते समय एक तो पढ़ने का काम हो रहा है साथ ही पढ़कर कौन सी चिज़ की जोड़ी किसके साथ बनेगी और क्यों इस पर चर्चा कर सकते हैं।

- जोड़ी बनाने वाले नामों की पर्चियां बना लें जैसे– चिड़िया, घोंसला, चकला, बेलन सुई धागा आदि। सभी प्रतिभागियों को लिखी गई एक–एक पर्ची वितरित कर दें। अब प्रतिभागियों को कहें कि आपको अपना साथी ढूंढ़ना है। उदाहरण के लिए जिसके पास सुई लिखी पर्ची है, उसका साथी धागा होगा, उसे उसके साथ बैठना है। एक दूसरे के परिचय में हर प्रतिभागी अपने साथी का नाम, तथा वह कहां से आया है, यह बताएगा। अपने साथी की घर की भाषा पूछकर बताएगा। साथ ही साथी की पसन्दीदा फिल्म का नाम भी पूछकर बताएगा।

गतिविधि: 2

- सभी सहभागी एक बड़े घेरे में खड़े हों ।
- एक गेंद देकर कहें कि जिस सहभागी को गेंद फेंक कर दी जाएगी वह अपना परिचय देगा। परिचय में नाम, योग्यता, शाला, एवं रूचि की जानकारी होगी। परिचय के बाद प्रशिक्षण से एक अपेक्षा भी बतानी है अपेक्षाओं को बोर्ड/चार्टशीट पर प्रशिक्षक लिख लें।
- परिचय देकर वह सहभागी अपनी गेंद दूसरे सहभागी के पास फेंकेगा और वह भी इसी प्रकार से परिचय देगा यही क्रम लगातार चलता रहेगा।
- प्रशिक्षक प्रत्येक सहभागी से उनके द्वारा पढ़ी गयी पसन्दीदा किताब का नाम और उसके बारे में पूछे।

नियम बनाना

विषय: प्रशिक्षण व्यवस्थित रूप से संचालित हो सके इसके लिए आवश्यक नियम बनाना।

प्रस्तावनाः प्रशिक्षण व्यवस्थित रूप से संचालित हो सके इसके लिए आवश्यक है कि सभी की सहभागिता हो पर इस सहभागिता के साथ आवश्यक है कि सभी मिलकर तय करे कि कौन से नियम हो जिससे कि कक्षा बेहतर तरीके से चले ।

सामग्रीः कार्ड शीट, मार्कर/स्केच पेन, बोर्ड, बोर्डमार्कर/चॉक।

काम करने का तरीका/चरणः

- सभी प्रतिभागीयों से इस बात पर चर्चा करें कि हम प्रशिक्षण को ठीक से चलाने के लिए क्या–क्या कर सकते हैं।
- प्रतिभागियों के विचारों को बोर्ड पर लिखते चलें।
- सबके सुझाव आ जाने के बाद बहुत जरूरी 5–6 नियम सबकी सहमति से बना लें। कोशिश करें कि नियमों की संख्या कम रहे तथा बेहद जरूरी चीजों पर ही नियम बनाएं। कुछ नियम इस तरह के हो सकते हैं–
  - प्रशिक्षण में समय से आना व समय से जाना (समय तय करने में प्रतिभागियों को भागीदार बनाएं)।
  - प्रशिक्षण के दौरान मोबाइल फोन साइलेंट मोड पर रखना।
  - प्रशिक्षण में दिए जा रहे कामों जैसे – समूह कार्य, व्यक्तिगत कार्य आदि में सहभागिता करना व अपनी जिम्मेदारी निभाना।
  - सामूहिक चर्चा में एक साथ बोलने के बजाए बारी आने पर अपनी बात रखना। अपनी बात कहने के लिए बारी का इंतजार करना।

सत्र – दो

बातचीतः

प्रस्तावनाः यह देखा गया है कि कक्षा में बात करने को गलत माना जाता है जबकि कक्षा में बात करने के मौके देने से वातावरण सहज बनता है। पढ़ना सीखने में बातचीत का भी अपना महत्व है। आगे के सत्रों में बातचीत को पढ़ना लिखने से जोड़ा जायेगा। बात लेख के साथ कुछ गतिविधियां दी गयी है । शिक्षक साथी इनमें से कोई एक गतिविधि कक्षा में अवश्य करवायें ।

पठन सामग्रीः बात –(बच्चें की भाषा और अध्यापक एक निर्देशिका , कृष्णकुमार)

- सहभागियों को लेख "बात "– (बच्चे की भाषा और अध्यापक एक निर्देशिका, कृष्णकुमार) पढ़ने को दें।
- लेख पढ़ने के बाद लेख में आये बिन्दुओं जैसे ढूंढना ,तर्क करना, आरोपण, भविष्यवाणी और सम्बन्ध बैठाना पर विस्तार से चर्चा करें ।

गतिविधि–तस्वीरों पर चर्चा

सामग्री–विभिन्न तरह के चित्र या तस्वीर (अखबारों और पत्रिकाओं के विज्ञापन, पोस्टर आदि में छपे चित्र)

नोट – तस्वीर को इस तरह रखें कि वह सभी सहभागियों को दिखाई दे ।

प्रक्रियाः

- सभी सहभागियों को गोले में बैठाकर तस्वीर को ऐसी जगह रखें जिससे सभी लोग अच्छे से देख सकें ।
- चित्रों को ध्यान से देखने के बाद हर सहभागी तस्वीर के बारे में बताए। स्रोत व्यक्ति भागीदारों को और बोलने के लिए प्रेरित करने हेतु इस तरह के प्रश्न पूछ सकते हैं–
- ये दिन के किस समय का चित्र होगा?
- रात होने पर इस चित्र में क्या बदल जाएगा?

सत्र – तीन

बूझों तो जाने : एक सहभागी की पीठ पर उसको बताए बिना एक चित्र कार्ड लगा दें। जिसकी पीठ पर चित्र लगा है वो बाकी सहभागियों से सवाल पूछते हुए बूझे कि उसकी पीठ पर किसका चित्र लगा है। सवाल ऐसे होंगे,जिनका उत्तर सिर्फ हां या ना में हो। सवाल इस तरह के हो सकते हैं–जैसे क्या वह जीवित है? क्या वह खाने की चीज है ? क्या उसे पहन सकते है ? क्या वह पढ़ने के काम आती है ? इस प्रकार कम से कम प्रश्नों में उत्तर आ जाना चाहिये।

- स्त्रोत व्यक्ति चार पॉच भागीदारों के साथ यह गतिविधि दोहराये।
- स्त्रोत व्यक्ति इस खेल पर टिप्पणी करते हुए बताये कि इससे जिसकी पीठ पर चित्र लगा है उसमें अनुमान लगाने का कौशल विकसित होता है। जो पढने के कौशल का प्रमुख घटक है, क्योंकि एक प्रवीण पाठक पढ़ते समय हर शब्द के हिज्जे नहीं करता बल्कि वाक्य संरचना के ज्ञान और समझदार अनुमान की सहायता से धाराप्रवाह रूप से पढ़ पाता है।

पढ़ने की समझ

प्रस्तावनाः अधिकांश शिक्षकों का कहना है कि बच्चों को पढ़ना कैसे सिखायें यह एक समस्या रही है। और पढ़ना क्या है? इस पर भी उनके अपने मत है इस सत्र में और आगे के सत्रों में पढ़ना क्या है?

और पढना सीखना की शुरूआत कैसे करें? पर समझ बनाने के लिये इसी पर आधारित लेख पढ़ेंगे और फिर उस पर चर्चा करेंगे।

पठन सामग्री: पढ़ना क्या है?

प्रशिक्षक भागीदारों से पूछे कि पढ़ना क्या है?भागीदारों द्वारा दिये गये उत्तर को बोर्ड पर लिखे। कुछ सम्भावित उत्तर इस प्रकार हो सकते हैं–

- अक्षरों की ध्वनियों को जोड़कर शब्द और फिर वाक्य बनाना ।
- किसी भाषा की लिपी को पहचानना ।
- छपी हुई सामग्री को उच्चारित करना ।

इन सभी उत्तरों में पढ़ने का कुछ अंश शामिल है। जब इन सभी जबाबों को एक साथ रखा जाये तब पढ़ने के हर पहलू को समझा जा सकता है यानि पढ़ना केवल लिपी या लिपीबध्द भाषा को बूझना ही नही बल्कि छपी सामग्री से कई स्तरों और उसके कई पहलुओं से अर्न्तक्रिया करना भी है ।

प्रक्रिया: स्त्रोत व्यक्ति नीचे दिये वाक्य को बोर्ड पर लिखे–

पैसा उन्डायिरनुवेंगिल नालु कडला वांगमायिरुन्नु
नालिल ओरु कडला तत्तेय कयिपिक्यमायिरुन्नु

सवाल 1 इसको पढ़ते हुए आप क्या बूझना चाह रहे थे?

सवाल 2 आपने इसे पढ़ लिया होगा, इस पढ़ने में क्या कमी है?

स्रोत व्यक्ति भागीदारों को बताए कि सिर्फ लिपि को पढ़ना या कोड करना पढ़ना नहीं है, क्योंकि इसमें समझना शामिल नहीं है। हिज्जे करके पढ़ रहे बहुत से बच्चे ऐसे ही पढ़ते हैं वे पढ़ने के बाद ये नहीं बता पाते कि क्या पढ़ा। यहां पर बच्चों की पढ़ना सीखने की कठिनाई पर शिक्षकों के अनुभव जानते हुए इस पर बात की जा सकती है कि हमारे सीखने के तरीके में क्या कमी है।

स्रोत व्यक्ति भागीदारों को चर्चा के बाद बता दे कि ऊपर लिखी पंक्तियों का मतलब है–

पैसे पास होते तो चार चने लाते
चार में से एक चना तोते को खिलाते।

सत्र – चार

पठन सामग्री: पढ़ना सीखने की शुरुआत लेख को सहभागियों को पढ़ने के लिये दें।

प्रक्रियाः पढ़ने के बाद स्रोत व्यक्ति भागीदारों से पूछे कि इसमें पढ़ना सीखने के किस तरीके को अनुचित कहा गया है? लेख में पढ़कर समझने में शामिल किन– किनं प्रक्रियाओं का जिक्र किया गया है? इस बारे में भागीदारों के कक्षा अनुभव क्या है।

दूसरा दिन

पढ़ना सीखने में पुस्तकालय की भूमिका

प्रस्तावना : कक्षा में पढ़ने की संस्कृति का विकास एकमात्र पाठ्यपुस्तक के सहारे नही हो सकता। पढ़ना सीखने के लिये यह जरुरी है कि बच्चें को पढ़ने की सामग्री मिले जो उसकी रुचि, उसके स्तरानुकूल हो। उनके परिवेश, भाषा के प्रति संवेदनशील हो। पुस्तकालय पढ़ना सीखने की प्रक्रिया में एकं अहम भूमिका निभाते है। पुस्तकालय की किताबों से कहानी सुनने, उन पर बातचीत करने से पाठकों को अनुमान लगाने जैसे उप कौशलो के इस्तेमाल के भरपूर मौके मिलते हैं। किताबें पढ़ने के आनन्द के साथ बच्चों के कौशल को भी सुदृढ़ करती हैं। इसके लिये बच्चों को पाठ्यपुस्तक के अलावा ऐसी बालसाहित्य की सामग्री उपलब्ध करवाना आवश्यक है जो उनकी रुचि और स्तर के अनुसार हो। और जो उनके पढ़ने के कौशल को भी सुदृढ़ करती हो।

सत्र – एक

सामग्री : बाल साहित्य की लगभग 100 किताबें ।

गतिविधि : 1 – स्त्रोत व्यक्ति सहभागियों से इन प्रश्नों का जबाब पूछे –

(क) बचपन में पढ़ी कौन सी किताब याद है ?

(ख) उस किताब में क्या खूबी थी, जिसके कारण वो आज भी याद है ?

सहभागी जो भी उत्तर दें उनमें से जो चर्चा के लिये महत्वपूर्ण लगे जिससे यह झलक मिले कि किताब को पढ़ने के बाद उनके जीवन में कोई फर्क पढ़ा हो उस पर विस्तार से चर्चा करें ।

कविता :

प्रस्तावनाः बच्चों में पढ़ने के कौशल की नींव ड़ालने के लिये कविता योगदान देती हैं। बच्चे इनमें रुचि लेते हैं। वे बच्चों को याद हो जाती हैं। याद हुई कविता का लिखित रूप शब्द बूझने में मददगार होता है। और पढ़ना सिखने मे भी मददगार होती है

कविता पोस्टर व कविता पट्टी (चार चने, धम्मक धम्मक, बन्दर मामा आदि) के साथ गतिविधियाँ :

- 2–3 कविताओं कि कविता पट्टी को मिलाकर समूह में दें।
- सभी सहभागी कविता पट्टी को जोड़ें कि वो किस कविता की है व उसका क्रम क्या है। अर्थात कविता पट्टी को इस तरह से जमवायें कि एक कविता बन रही हो।
- अन्त में उस कविता पोस्टर को लगायें और शिक्षक उस पोस्टर से कविता पट्टी का मिलान करे ।
- कविता पोस्टर को बोर्ड पर लगाये ।
- कविता का सामूहिक गायन 2 – 3 बार करवायें।

गतिविधि : कविता पोस्टर (चार चने, धम्मक धम्मक, बन्दर मामा आदि) में दी गयी कविता को उंगली रखकर पढ़वायें।

- कविता में बार–बार आये शब्दों पर गोला लगवायें।
- कविता में आये शब्दों के एक से अधिक शब्द चित्र कार्ड बनबायें।

  इन चित्र शब्द कार्ड के साथ गतिविधियां करवायें जैसे –

दोस्त ढूढों: सभी सहभागियों को गोलें में बैठाये। जितने भागीदार हैं, उनमें से आधे को शब्द कार्ड व बाकी आधे को शब्द चित्र कार्ड दें। उनसे कहे कि हर सहभागी अपना दोस्त ढूढें।

इस तरह जोड़ी बनाने के बाद अन्य गतिविधिया करवाई जा सकती है, दोनों सहभागी शब्द/चित्र के बारे में बतायें।

गतिविधियों के लिये कार्ड छांटने के कई आधार हो सकते है ।

क – एक समुह के चित्र जैसे जानवर ,फल, घर की चीजे आदि

ख – ऐसे शब्द जिसमें क अक्षर आये जैसे कछुआ, बकरी ,चकला ,मटका आदि ।

सत्र – दो

पठन सामग्री : साहित्य और पढ़ना सीखना के इर्द – गिर्द लेख पढ़ना और उसपर चर्चा करना ।

लेख पढ़ने के बाद स्त्रोत व्यक्ति भागीदारों से पूछेः

लेख में पढ़ना सिखाने की किन कमियों के बारे में उल्लेख है?

लेख में पढ़ना सीखने के लिए किस तरह की कहानियों और कविताओं को उपयोगी बताया गया है?

स्त्रोत व्यक्ति इस लेख के माध्यम से इस मुद्दे पर बात करें कि पाठ्य पुस्तक के साथ बाल साहित्य का कक्षा में बेहतर उपयोग कैसे करे या क्या इस लेख में जिन बिन्दुओ को उठाया गया है उसका पाठ्य पुस्तक के साथ कैसे उपयोग करेंगे।

सत्र – तीन

बच्चों के स्तर के अनुसार किताबों का चयनः

प्रस्तावनाः किताबों का स्तरीकरण एक पद्वति है जिसके तहत पुस्तकालय की किताबों को वर्गीकृत किया जाता है। किताबों को स्तरों मे वर्गीकृत करने से यह फायदा होता है कि अध्यापक बच्चों को पढ़ने के कौशल के स्तरानुसार किताबें दे सकते है। शोध दर्शाते हैं कि अगर बच्चों को वे किताबें पढ़ने को मिलें जो वे पढ़ सकते है तो बच्चे ज़ल्दी पढ़ना सीखते हैं। उनके पढ़ने के कौशल का विकास भी जल्दी–जल्दी होता हैं। किताबें पढ़ लेने की खुशी से बच्चों मे आत्मविश्वास बढ़ता है जो पढ़ने के कौशल के लिए जरुरी होता हैं। हम पढ़–पढ़ कर ही पढ़ना सीखते है और अगर बच्चों को उनके लिए उपयुक्त किताबें पढ़ने का अवसर ज्यादा मिले तो उनके सफल पाठक बनने की संभावना बढ़ जाती हैं।

- हर कक्षा मे विभिन्न स्तरों वाले बच्चे होते है। अगर उनको स्तरवार किताबें पढ़ने के लिए दी जाये तो वे इस आश्वासन के साथ पढ़ते जाते है कि वे पढ़ सकते हैं। ऐसे में बच्चे ज्यादा किताबें पढ़ने के लिए प्रोत्साहित होते हैं।
- पुस्तकालय की पुस्तकें ऐसी हों जो बच्चों में उत्सुकता, जिज्ञासा,कल्पनाशीलता, तार्किकता, एंव रचनात्मकता जैसे कौशलों को विकसित करने में मददगार हों।
- पुस्तकें ऐसी हों जो लोकतांत्रिक मूल्यों , समानता, जागरुकता, सौंदर्यबोध आदि को बढ़ाती हो।
- किताबें बच्चों की स्वतंत्र छवि को उभारती हों ।
- किताबों के चित्र विविधता, कल्पनाशीलता व गतिशीलता लिए हों।

पठन सामग्रीः किताबें करती है बातें (अन्जलि नरोन्हा) लेख पढ़ने को दें और मुख्य बिन्दुओं पर चर्चा करें जैसे –

1 अच्छे बाल साहित्य की विशेषतायें ।

2 किस उम्र के बच्चों के लिये कौन सी पुस्तकें उपयुक्त हैं ?

सत्र – चार

गतिविधिः (अ) शिक्षक सहभागियों को चार छोटे समूह में बांटकर प्रत्येक समूह में एक–एक किताब देकर उनकी समीक्षा करवायें और समीक्षा में उभरे बिन्दुओं को बोर्ड पर लिखकर उन पर चर्चा करें।

नोटः समीक्षा के लिये ऐसी किताबों को चुने जो कक्षा 1 से 5 के बच्चों के स्तर की हो।

(ब) पुस्तकालय के अर्न्तगत की जाने वाली गतिविधियां : उदाहरण के लिए एक गतिविधि यहां दे रहे है –

गतिविधि : पुस्तकालय के अर्न्तगत की जाने वाली प्रमुख गतिविधियांः

कहानी आधारित गतिविधियां :

1. **अधूरी कहानी पूरी करनाः** प्रशिक्षक सहभागियों को पुस्तक की किसी एक कहानी को किसी ऐसे मोड़ पर अधूरा छोड़ दे,जिससे आगे जाने की जिज्ञासा सहभागियो में पैदा हो, और सहभागी इस कहानी को लिखकर पूरा करें। पूरी की गई कहानी का प्रस्तुतिकरण करवाएं।
2. उपरोक्त गतिविधि कविता के साथ भी करवाई जा सकती है ।
3. प्रशिक्षक सभी सहभागियो से कहें कि अपनी जिन्दगी में घटी घटना के आधार पर कहानी बनायें और उसे प्रस्तुत करें ।

कुछ और गतिविधियां –

1. कहानी को नाम देना
2. मिलकर कहानी बनाना
3. कहानी पर चित्र बनाना आदि

तीसरा दिन

सत्र – एक व दो

प्रतिवेदन पढ़ना और उसके मुख्य बिन्दुओ पर चर्चा करना।

स्तर अनुसार किताबों का चयन

गतिविधिः प्रशिक्षक सहभागियों के तीन समूह बनाये और प्रत्येक समूह को लगभग 20–20 किताबों का एक सेट देकर उनसे निम्न आधारों पर किताबों का स्तरीकरण करवायें

(अ) **पढ़ने की तरफः** इस समूह में ऐसी किताबें आयेंगी जिसमें बडे चित्र जो हर एक पेज का पाठ्यवस्तु के लिये प्रासगिंक हो, सरल शब्द हो, बच्चों के लिये अर्थपूर्ण हो और रोचक हो।

(ब) **पढ़ना लिखना सीख रहे है:** चित्रों के साथ कम लिखी लाइनो में मनोरंजक कहानियों, कविताओं वाली पुस्तकें हो ।

(स) **पढ़कर समझ लेते है और लिख सकते है:** सरल सूचनात्मक ,रहस्य ,रोमांच, आविष्कारों और अमूर्त अवधारणाओं आदि से युक्त पुस्तकें हो ।

भागीदारों द्वारा चुनी हुई किताबों को तीनो स्तरों में डालकर किताबों के नाम एक कार्ड शीट पर लिख लें।

फिर चुनी हुई किताबों की प्रस्तुति इन बिन्दुओ पर करें :

1. चुनी हुई किताब में से किसी एक किताब की सक्षेंप में कहानी बताये ।
2. यह किताब किन आधारों पर चुनी।
3. चुनी हुई किताब के द्वारा कौन –कौन सी गतिविधियां की जा सकती है किसी एक का प्रस्तुतिकरण करवायें।

सत्र – 3

प्रस्तावना: बच्चों को कहानी सुनाना जैसी परंपरा अब कम होती जा रही है। कक्षा में जहॉ शिक्षक बच्चों को कहानी सुनाते हैं वहां बच्चों और शिक्षक के बीच आत्मीय रिश्ता बना रहता हैं। कहानी सुनाना पढ़ना सीखने की प्रक्रिया में बेहद सहायक होता है। इसके द्वारा बच्चे मौखिक और लिखित दोनो भाषाओ से परिचित होते हैं। बार–बार सुने हुए शब्दों को किताबों में छपे रूप में देखकर सह – संबंध बिठा लेते हैं।

पठन सामग्रीः कहानी सुनाने की जरुरत लेख सभी को पढ़ने के लिये दें और उसमें दी गयी कहानी के मुख्य पहलुओं–चरित्र, घटना, प्लाट, सेटिंग आदि पर चर्चा करें।
उदाहरण के लिए कहानी में कितने पात्र हैं? मुख्य चरित्र कौन सा है? कहानी में क्या घटना घटती है, या समस्या पैदा होती है? समस्या का समाधान कैसे होता है? कहानी कौन कह रहा है?

सत्र – 4

अभिनय

प्रस्तावनाः अभिनय, बच्चों को विभिन्न भूमिकाओ को बातचीत ,हावभाव के जरिये प्रस्तुत करने को मौका देता है। एक भाषाई गतिविधि के रुप में नाटक के इस्तेमाल के लिये ये दो चीजें– आजादी और आनन्द बहुत जरुरी है।

नाटक बच्चों के लिये निराली चीज नही है वह तो उसकी जिन्दगी का भाग है। नकल उतारना, किसी चीज को बढ़ाचढ़ाकर बताना जैसी नाटकीय युक्तियों का प्रयोग बच्चे करते ही रहते है ।

अभिनय के लिये किसी भी घटना की कहानी पर्याप्त है। नाटकीय कहानियों के सबसे अच्छे उदाहरण आपको बच्चो की बातों से मिल सकते है ।

अभिनय विभिन्न तरह से कर सकते हैं:

1. **रोल प्ले** : स्त्रोत व्यक्ति रोल प्ले के लिये अलग अलग पर्चियों में डर ,खुशी, गुस्सा जैसे शब्द लिखें और सहभागी एक–एंक कर उस पर्ची को उठायें और पर्ची में लिखे शब्द के अनुसार अभिनय करें।

2. **कहानी पर अभिनयः** स्त्रोत व्यक्ति सहभागियों को चार समूह में बांटे। प्रत्यके समूह को एक कहानी की किताब दें। सहभागी दी हुई कहानी को पढ़कर उसे अभिनय रुप में प्रस्तुत करें।

नोट – टीम के प्रत्येक सदस्य की इसमें भागीदारी हो।

कहानी पर अभिनय के दौरान बच्चों को पढ़कर समझना होता है और उसे अपने शब्दो में व्यक्त करना होता है। इससे बच्चों की झिझक भी टूटती है और आत्म विश्वास भी बढता है।

गैर कथा साहित्य (non-finction) किताबों के साथ कामः बच्चे करके सीखते हैं। अपने खाली क्षणो में बच्चे कुछ न कुछ करते रहते हैं। इस दौरान वे नयी कुशलतायें सीखते हैं और अलग अलग चीजों के गुणधर्मो से भी परिचित होते हैं। ऐसी किताबें जिनमें बच्चों को पढ़ते हुए कुछ बनाने आदि का मौका मिले, इसमें मददगार हैं। मेरी दस उगंलिया, कबाड़ से जुगाड,मन गणित ., वर्ग पहेली , आदि पुस्तकें इस श्रेणी में रख सकते है ।

जानकारी बढ़ाने वाली किताबों को भी इस श्रेणी में रख सकते है। हवा रानी को चाहिये बदलाव,रक्त की कहानी आदि इस तरह की किताबें हैं।

प्रशिक्षक इन किताबों को पढ़कर पहले स्वंय तैयारी करे और फिर जिस गतिविधि को कराना है । उसके लिये आवश्यक सामग्री एकत्र कर लें। फिर सहभागियो से करवायें।

चौथा दिन

लेखन

प्रतिवेदन पढ़ना और उसके मुख्य बिन्दुओ पर चर्चा करना।

प्रस्तावना: बच्चों को भाषा सिखाते समय अध्यापकों का ज्यादा ज़ोर पढ़ना और लिखना सिखाने पर होता है। लिखना पढ़ना मानक भाषा में होता है। इसमें लिपि की आवश्यकता होती है। सुनना और बोलना में लिपि के ज्ञान की आवश्यकता नहीं है। सुनने बोलने का प्रशिक्षण अनायास हो जाता है। आप जानते ही है कि बच्चा जब स्कूल में आता है तो वह सुनकर समझने और बोलने में कुशल होता हैं। पर लिखने में उसको दिक्कत आती है। इसका कारण यह है कि बोलने में हाव भाव और कहने और सुनने वाले का प्रत्यक्ष सम्पर्क सम्प्रेषण में मदद करता है। लिखने में हमको यह सब लिखकर ही व्यक्त करना होता है और यह कोई जरूरी नही है कि पढ़ने वाला सामने ही हो वह कही दूर भी हो सकता है। बच्चे जब पढ़ना सीख रहे होते हैं तो वे सही अक्षर का चयन करना, सही वर्तनी का इस्तेमाल करना आदि समस्याओ से जूझते हुए पढ़ते हैं। और यदि यह सब करते हुए वे पढ़ना सीखते भी हैं तो उसमें पढ़कर समझना नही हो पाता है क्योंकि वे पढ़कर समझना नही उच्चारण के साथ पढ़ना सीख रहे होते हैं।

कक्षा में सोचने,बोलने और सुनने की गतिविधियॉ हों तो वे बच्चों को पढ़ना लिखना सीखने मे भी मदद करती हैं उदाहरण के लिये किताब के चित्र दिखाकर बच्चों को कोई रोचक कहानी कक्षा में सुनायें। बच्चे अच्छी कहानियों को बार–बार सुनना चाहते है। और सम्बन्धित किताब उठाकर पढ़ने की कोशिश भी करते है। अगर कक्षा में सुनना बोलना पढ़ना लिखना होता रहे तो इससे भाषा शिक्षण में मदद मिलेगी।

हम देखते है कि बच्चें रोज़मर्रा की विभिन्न स्थितियों में बड़ो को एक दूसरे से बात करते हुए सुनते हैं। धीरे धीरे बच्चे खुद अपने विचार दूसरों तक पहुँचाने के लिये मिलती जुलती सरंचनाओ का इस्तमाल करने लगते हैं और बड़ो की प्रतिक्रिया अनुसार उन्हे बदलते चलते हैं । यह कौशल बातचीत के स्वाभाविक और अर्थपूर्ण सन्दर्भ में विकसीत होता है ।

इसी उम्र में बच्चे अपने आसपास की लिखित सामग्री जैसे कि बिस्कुट और टॉफी की पन्नी आदि पर लिखे नाम, सड़क पर लगे निर्देश बोर्ड , पोस्टर , दुकानो के नाम आदि को पढ़ने की कोशिश करते है। हाथ में कलम या पेनसिल आते ही आड़ी तिरछी लकीरे खींचकर उसके साथ कोई अर्थ या सन्देश जोड़ने की कोशिश करते हैं यही लिखने की शुरुआत का हिस्सा है।

शुरुआती लेखन

बच्चों की आड़ी तिरछी लकीरे पढ़ने लिखने की प्रक्रिया का एक बेहद जरुरी हिस्सा है । यदि हम इन आडी तिरछी लकीरों को नही सरायेगें तो बच्चे पढ़ने लिखने की यात्रिंकता में ही उलझ कर रह जायेगें। ये लकीरें ही बच्चों के लेखन के वे महत्वपूर्ण पढ़ाव है जहॉ बच्चा पढ़ने लिखने को सार्थकता से देख रहा है। वह यह समझ रहा है कि मन की बात को लिखा जा सकता है और लिखी गयी बात को पढ़ा जा सकता है।इसलिये कक्षा में अगर इस तरह के लेखन को जगह दी जाये जिसमें बच्चों की अपनी कल्पना, समझ, और अनुभव की झलक हो, तो ये उनके लिये रोचक काम बन सकेगा और लेखन के प्रति वे उत्सुक हो सकेंगे इसलिये पहला काम तो यही हो सकता है कि बच्चों में भरोसा जगायें कि वे लिख सकते हैं । बच्चों के लेखन में अक्सर उनके भाषाई परिवेश के शब्द होते हैं । लिखने में वर्तनी की गल्तियां भी होती है। इसलिये जब उनसे लिखने को कहा जाता है तो वे इसके प्रति अनिच्छुक हो सकते है। इसके लिये उनकी भाषा के शब्दों को कक्षा में जगह देनी होगी। प्रारम्भ में वर्तनी की गल्तियों को नजरअन्दाज करना होगा।

बच्चों का चित्र लेखन

बच्चों का चित्रांकन शुरुआती दौर के पढ़ने लिखने के अनुभव की एक महत्वपूर्ण कड़ी है ।

यह प्रक्रिया धीरे धीरे लिखित रुप में सामने आने लगती है। शब्दों में अपनी बात लिख लेने की स्थिति से पहले, चित्रों द्वारा अपनी बात को कहने का एक दौर शुरु होता है। चित्रों में बच्चों की कोशिश होती है कि वे अपनी बात को व्यक्तिगत रुप में अपने अदांज में कह सके। बच्चे चित्रों के माध्यम से अपनी बात कहकर आनंदित होते है। चित्रों में आ रहे बदलाव बच्चों के लेखन की प्रगति का सूचक होते हैं।

किसी भी भाषा को लिपिबध्द करने के लिये कागज पर जटिल आकृतियॉ बनानी होती हैं। अक्षरों की छोटी छोटी आकृतियों के बारीक भेद देख पाना और याद रखना जरुरी होता है। लिखने के लिये यह भी जरुरी है कि अमूर्त प्रतिकों के जरिये अपने विचार और भाव व्यक्त करना आता हो । वर्णमाला के अक्षर अमूर्त प्रतिक होते है वे अमूर्त इसलिये हैं कि उनकी आकृति और उनसे जुड़ी ध्वनियों के बीच कोई समरुपता नही है उदाहरण के लिये "अ" अक्षर की आकृति का "अ" की ध्वनि से कोई तार्किक सम्बन्ध नही है ।

बस हम उसे "अ" के रुप में स्वीकार करते चलते है जब बच्चा हिन्दी लिखना सीख रहा है तो उसे "अ" को "अ" के रुप में स्वीकार करना होगा और उसका उपयोग उचित जगह पर करना सीखना होगा। उसे इस तरह के कई प्रतिकों को याद रखना पड़ेगा ।

कक्षा में लेखन को सार्थक ब रुचिकर बनाने के लिये की जाने वाली कुछ गतिविधियाँ:

सत्र – एक

पठन सामग्री : पढ़ने और लिखने का सम्बन्ध पढ़ना और उस पर चर्चा करना ।

लेख पढ़ने के बाद स्रोत व्यक्ति भागीदारों से पूछे :

लेख में पढ़ना और लिखना में क्या सम्बन्ध लगता है ?

स्त्रोत व्यक्ति चर्चा के दौरान जो मुख्य बिन्दु आये उन्हे समेकित करते हुए बोर्ड पर लिखें ।

गतिविधि:कविता को आगे बढ़ाना: यह गतिविधि अपनी अवलोकन क्षमता का उपयोग करते हुए कविता को आगे बढ़ाने का मौका देती है। इसमे केवल कविता की नकल उतारनी नही है अपितु अपनी सूझबूझ से आगे बढ़ानी है।

स्त्रोत व्यक्ति कविता की चार लाइन को बोर्ड पर लिखे और फिर सहभागियों को इसे आगे बढ़ाने को कहें, कविता की लाइने ये है :

गाय ओ गाय
तू कहाँ गयी थी ,
यही थी पास में
घास की तलाश में

बिल्ली ओ बिल्ली ———
____
____

तोता ओ तोता ———
____
____

उपरोक्त पक्तियों में सिर्फ दो जगह बदलाव करना पढ़ते है:

जैसे बिल्ली ओ बिल्ली तू कहॉ गयी थी
यही थी पास में
चूहे की तलाश में

इसमें बच्चों को कम लिखना पढ़ता है पर मौखिक रुप से उसे करने के लिये पूरे वाक्य की संरचना को समझकर ठीक करना पढ़ता है। इसके लिये वह अपनी कल्पनाशीलता का भी उपयोग करता है। जो कि लेखन की शुरुआत वाले बच्चों के लिए उपयुक्त है ।

सत्र – दो

घटनात्मक चित्र पर शब्द/वाक्य लिखना ।

यह गतिविधि चित्रों को बारीकी से पढ़ने का मौका देती है और चित्र पढ़कर उसे लिपि रुप में लिखने का अवसर देती है।

इस गतिविधि के लिये स्त्रोत व्यक्ति ऐसे चित्र का चुनाव करें जिसमें एक या दो घटना घट रहीं हो जैसे लड़की का सायकिल से गिरना, बच्चों का आपस में झगडना या बच्चों की गेंद खो जाना।

स्त्रोत व्यक्ति भागीदारों का समूह बनाये और प्रत्येक समूह में चित्र दें ।

स्त्रोत व्यक्ति प्रत्येक भागीदार को चित्र देखकर उस पर शब्द या वाक्य लिखने को कहें ।

भागीदारों ने चित्र को देखकर जो वाक्य या शब्द लिखे हैं उसका प्रस्तुतिकरण कक्षा में करवायें और दूसरे भागीदार यह सुनिश्चित करें कि चित्र और लिखे का सम्बन्ध है या नही ।

गतिविधिः

पॉच–छह शब्दों से एक सार्थक अनुच्छेद बनाना ।

इस गतिविधि के द्वारा शब्दों को वाक्यों में पिरोकर उसके द्वारा किसी घटना या विवरण का चित्र प्रस्तुत करना है। जिसमें वाक्य निर्माण की क्षमता का विकास हो सकेगा।

स्त्रोत व्यक्ति ऐसे शब्दों का चुनाव करे जो वर्णनात्मक या घटनात्मक हो जैसे (खूबसूरत, खाना, नहाना, चलना)

स्त्रोत व्यक्ति बोर्ड पर कम से कम 10 शब्द लिखें। और सहभागी से कहे कि इन शब्दों का उपयोग करते हुए अनुच्छेद बनाये। ।

प्रश्न बनाने के बाद कक्षा में सहभागी अपना – अपना अनुच्छेद पढ़कर सुनाये। कौन सा अनुच्छेद उन्हे समझ में आया और क्यों ? अगर कमी लगी तो क्या इसके बाद सहभागियों द्वारा बनाये गये अनुच्छेद का डिसप्ले करवाये। जिससे सभी सहभागियों को एक दूसरे का अनुच्छेद पढ़ने का मौका मिलेगा।

सत्र – तीन

गतिविधि

अपने अनुभव लिखना।

प्रस्तावना : अपने अनुभव को लिखकर व्यक्त करने से स्वंय को और अधिक जानने का मौका मिलेगा। दूसरो के अनुभव को पढ़ने का भी मौका मिलेगा। साथ ही लेखन कौशल का भी विकास होगा।

स्त्रोत व्यक्ति सहभागियों को कहानी या किसी के द्वारा लिखे गये ऐसे लेख पढ़ने को दे जिन में काफी विस्तार से विभिन्न घटनाओं का वर्णन हो। सहभागी इन लेखो को पढ़ेंगे और समझेंगे कि किसी लेखन में कितना और कैसा विवरण कितनी विस्तार से लिखा है। और यह कितना प्रभावशाली है घटना का दृश्य बना पाने में। इसके लिये इन किताबों का भी उपयोग कर सकते है **आजादी की नुक्ति, लोमडी और जमीन, बड़ो का बचपन आदि** ।

स्त्रोत व्यक्ति सहभागियों को कुछ समय तक आपस में अपने जीवन से जुडी घटना,खट्टे मीठे अनुभव या जो सोचा न हो और वो घटा हो इस पर बातचीत के मौके दें।

स्त्रोत व्यक्ति लिखने की प्रक्रिया इस तरह से सचांलित करें :

अ. सभी सहभागी सबसे पहले घटना को एक क्रम से और विस्तार से सोचे।

ब. मुख्य बातों को बिन्दुबार लिख लें।

स. लिखते समय सहभागी को यह ध्यान देना होगा वे अपना लेखन इन बिन्दुओ को ध्यान में रखकर करें।

कौन –कौन उस घटना में शामिल था ?

क्या घटना घटी?

कब और कहां हुई?

क्यों और कैसे हुई?

जब सभी सहभागी अपना–अपना लेखन कार्य कर ले तो स्त्रोत व्यक्ति कुछ सहभागियों के लेखन का प्रस्तुतिकरण कुरवायें ।

सत्र – चार

प्रस्तावना :चित्र भी एक प्रकार से मन की प्रभावी अभिव्यक्ति है जरूरत है तो उन्हे समझने की । बच्चें भी अपनी समझ,भावनाओं और कल्पनाओं को चित्रों के माध्यम से अभिव्यक्त करते है । ये चित्र आड़ी तिरछी लकीरों और सामान्य लेखन के बीच सेतु का कार्य करते है । बच्चों के चित्रों पर बातचीत कर,उन्हे जीवन के विविध अनुभवों से जोडकर शिक्षक बच्चों के लेखन और उनकी सृजनात्मकता को दिशा दे सकते है ।

इस सत्र और आगे के सत्र में लेखन पर दो लेख है आप इन लेखों को पढ़ने के बाद इनमें दी गयी गतिविधियों को कक्षा में अवश्य करवायें ।

पठन सामग्री : लिखने की शुरुआत किताब से "बच्चों का चित्र लेखन" लेख पढ़ना और उस पर चर्चा करना ।

स्त्रोत व्यक्ति सभी सहभागियों को लेख पढने को देंगे। और उसके बाद निम्न बिन्दुओ पर सहभागियो के साथ चर्चा करेंगे।

अ. लेखन से पहले चित्र का होना क्यों जरुरी है?

ब. शुरुआती दौर में बच्चे अपनी बात कहने के लिये किसका सहारा लेते है?

स्त्रोत व्यक्ति चर्चा के दौरान जो मुख्य बिन्दु आये उन्हे समेकित करते हुए बोर्ड पर लिखें ।

पांचवा दिन

सत्र –एक

प्रतिवेदन पढ़ना और उसके मुख्य बिन्दुओ पर चर्चा करना।

पठन सामग्री : लिखने की शुरुआत किताब से "कक्षा एक और दो में लेखन : एक दृष्टिकोण" लेख पढ़ना और उस पर चर्चा करना।

स्त्रोत व्यक्ति लेख सभी सहभागी को पढ़ने को देंगे और पढ़ने के बाद निम्न सवालों पर चर्चा करेंगे –

अ. आपकी नजर में कक्षा में लेखन करने के लिये आप बच्चों को किस प्रकार के मौके देंगे?

ब. आपके विचार में पढ़ने लिखने में क्या सम्बन्ध है?

स्त्रोत व्यक्ति चर्चा के दौरान जो मुख्य बिन्दु आये उन्हे समेकित करते हुए बोर्ड पर लिखें ।

सत्र–दो व तीन

लेखन में बाल अखबार की भूमिका

प्रस्तावना: बाल अखबार लेखन को दो तरह से भाषा सशक्त करने के मौके देता है ।

1. बाल अखबार शब्द भण्डार की वृध्दि, लेखन क्षमता का विकास, वाक्य निर्माण में वृध्दि, वाक्य संरचना में वृध्दि,सहयोग की भावना का विकास, जिज्ञासा का विकास करने में मदद करता है।

2. बाल अखबार केवल पाठ्यपुस्तक और पुस्तकालय की किताबों तक सीमित नही है बल्कि अपने साथियों के विचारो को पढ़ने लिखने के मौके देता है।

बाल अखबार का निर्माण

सामग्री: कार्ड शीट, फेविकाल, कैंची,स्केच पेन, स्केल, रबड, पेन्सिल, पत्र–पत्रिकाऐं, साथियों द्वारा पहले से तैयार कविता, कहानी, घटना, आदि की आवश्यकता होगी ।

प्रक्रिया : स्त्रोत व्यक्ति चार पॉच सहभागियो की एक टीम बनायेंगे। प्रत्येक टीम बाल अखबार निकालेगी। इस प्रकार लगभग पांच छह बाल अखबार निकलेंगे।

स्त्रोत व्यक्ति बाल अखबार निर्माण से पहले सभी सहभागियों को यह निर्देश दें –

1. प्रत्येक टीम अपने बाल अखबार का नाम स्वयं तय करें ।
2. अखबार में प्रत्येक भागीदार की भागीदारी सुनिश्चित है ।
3. सामग्री के रुप में कहानी ,कविता , मोहल्ले की खबर, स्कूल की खबर ,शहर की खबर , मौसम की जानकारी, चित्र आदि को शामिल करेगें ।
4. प्रत्येक सहभागी अपनी रुचि के अनुसार उपरोक्त में से कोई एक विषय चुने।
5. सहभागी चुने हुए विषय पर अपनी पूर्व तैयारी कर ले ।
6. कार्ड शीट पर लिखनें के लिये किस साथी को कितनी जगह की जरुरत होगी यह आपस में तय कर ले ।
7. किसको क्या करना है यह तय होने के बाद प्रत्येक सहभागी अपना लेखन शुरु करे।
8. बाल अखबार तैयार होने के बाद उसे डिस प्ले बोर्ड पर लगा दें।

स्त्रोत व्यक्ति प्रत्येक टीम द्वारा बनायें बाल अखबार को प्रस्तुत करने के लिये कहें। बाल अखबार बनाते समय उन्हे किन–किन चरणो से गुजरना पड़ा उसका उल्लेख करें। अन्य सहभागी उस पर फीड़ बैक देंगे।

सत्र – चार

पुस्तकालय प्रबन्धन और आगे की कार्ययोजना पर काम करना :

- भागीदारों को पुस्तकालय प्रबन्धन एंव संचालन व्यवस्था से परिचित करवाना।
- सहभागियों से पुस्तकालय के प्रदर्शन, साजसज्जा एवं रखरखाव की व्यवस्था पर बात करना। स्त्रोत व्यक्ति सहभागियों को समूह में बांट दें। और उनसे निम्न बिन्दुओ पर चर्चा करने को कहें –
  - बाल पुस्तकालय के लिये बच्चों की समिति का गठन और उनकी भूमिका ।
  - पुस्तकालय के प्रदर्शन, साजसज्जा एंव रखरखाव उनके स्कूल के अनुसार कैसे हो इस पर बातचीत ।

पुस्तकालय का सचांलन: स्त्रोत व्यक्ति सहभागियों को बताये कि यह पुस्तकालय केवल किताबें, अलमारियों में रखने और इश्यु करने तक ही सीमित नही है। अपितु यह कक्षावार पुस्तकालय है जिसमें प्रत्येक भागीदार को अपनी कक्षा के स्तर अनुसार लगभग 50 किताबों का चयन कर किताबों को कक्षा में ले जाना होगा और उन किताबों पर गतिविधियां करते हुए बच्चों में पढ़ने लिखने की समझ को विकसीत करना होगा। इस समझ को पुख्ता करने के लिये बच्चों द्वारा तैयार सामग्री को सभी बच्चों तक पहुँचाने के लिये उनका डिसप्ले करना पढ़ने लिखने का ही एक हिस्सा है। इसके लिय आवश्यक है कि बच्चों द्वारा बनाई सामग्री को डिसप्ले किया जाय व उस पर चर्चा की जाये। और बाद में उसे व्यवस्थित रुप से फाइलो में रखे। पुस्तकालय के लिये जैसा कि आरटीई में भी लिखा है कि एक पीरियेड नियमित रुप से हो। अतः आवश्यक है कि स्कूल की समय सारणी में भी पुस्तकालय का पीरियेड़ हो।

भागीदारों को पुस्तकालय प्रबन्धन एंव संचालन व्यवस्था से परिचित करवाना:

प्रक्रिया:

पुस्तकालय के संचालन व प्रबन्धन के लिये प्रत्येक कक्षा में से पॉच बच्चों की समिति गठित करें। इस समिति की यह भूमिका होगी की वो किताबों के रखरखाव, किताबें इश्यु करना व फटी किताबों को दुरुस्त करे।

सहभागियों के साथ पुस्तकालय के प्रदर्शन, साजसज्जा एवं रखरखाव की व्यवस्था पर बात करना:

कक्षा में हुए काम को डिसप्ले करना और बाद में उसे फाइलो में व्यवस्थित करके रखना। बाल अखबार बनाते समय इस सामग्री का उपयोग कर सकते है तथा चित्रों और उस पर लिखे वाक्यों को जोडकर किताबों के निर्माण का कार्य भी किया जा सकता है।

पठन सामग्री

पहला दिन

सत्र–2 : बात

हमारे स्कूलों में बात करना प्रायः गलत समझा जाता है। यह माना जाता है कि यदि कोई बात कर रहा है तो ठीक से पढ़ाई नहीं कर रहा होगा। इसलिए जैसे ही अध्यापक बच्चों को बात करता हुआ देखता है, वह तुरन्त उन्हें रोकता है। बात करने की छूट बच्चों को सिर्फ आधी छुट्टी में रहती है जब अध्यापक कोई महत्वपूर्ण काम नहीं कर रहा होता है।

बातचीत के प्रति उपेक्षा की वजह से हम शिक्षा में बातचीत के उपयोगों की अवहेलना करते आ रहे हैं। यह स्थिति सभी स्तरों पर है, पर प्रारम्भिक स्तर पर यह सबसे स्पष्ट है। नर्सरी व प्राइमरी स्कूल के बच्चों के लिए बातचीत करना सीखने और सीखी हुई चीज़ को सुदृढ बनाने का एक बुनियादी माध्यम है। सच तो यह है कि ऐसे अध्यापक, जो बच्चों को बात नहीं करने देते, किताबों व अन्य सामग्री के लिए पैसे की कमी की शिकायत करने के हकदार नही हैं। वे पहले ही एक ऐसा मूल्यवान साधन बेकार जाने दे रहे हैं जिसके लिए कोई पैसा नहीं खर्च करना पड़ता। इसलिए ऐसा स्कूल जहाँ छोटे बच्चे बात करने को स्वतन्त्र नहीं, बडा फिजूलखर्च स्कूल कहलाएगा।

यह सही है कि बच्चे तरह–तरह के उद्देश्य लेकर बातचीत करते है और ये सभी उद्देश्य अध्यापक के लिए उपयोगी नहीं कहे जा सकते। उदाहरण के लिए बोरियत के मारे बात करने और दूसरे की निगाह से चूकी हुई चीज़ उसे दिखाने के लिए बात करने में फर्क है। दूसरी किस्म की बात बच्चे की सीखने की प्रक्रिया को बल देती है, जैसा कि दो बच्चों के इस संवाद में हो रहा है। ये बच्चे अध्यापिका की मेज़ के पास इन्तज़ार में खडे फुसफुसा रहे है और अध्यापिका रजिस्टर भरने में लगी है :

पहला बच्चा : देखा, आज बहन जी अंगूठी पहने है?

दूसरा बच्चा : तुमने पहले नहीं देखी?

पहला बच्चा : नहीं...हाँ, हाँ, मैंने पहले देखी है।

दूसरा बच्चा : अरे, लेकिन यह अंगूठी दूसरी है।

पहला बच्चा : बहन जी ने नई अंगूठी खरीदी है। वह पहले वाली तो छोटी है।

दूसरा बच्चा : नहीं, पतली है।

यदि आप इस छोटे–से संवाद का विश्लेषण करें तो सीखने की उन सम्भावनाओं को पहचान सकेंगे जो बातचीत के ज़रिए ही इन दो बच्चों को उपलब्ध हुई। यदि पहले बच्चे ने अध्यापिका की अंगूठी देखकर बात न छेड़ी होती तो उसे यह **याद करने** का मौका न मिलता कि बहन जी पहले भी अंगूठी पहनती थीं। यदि यह बातचीत न हुई होती तो दूसरे बच्चे को पुरानी और नई अंगूठी में **फर्क देखने** का अवसर न मिलता, न ही यह **समझने** का अवसर मिलता कि छोटी और पतली में क्या भिन्नता है। बातचीत के इन उपयोगों के प्रति सचेत होने के लिए ज़रूरी है कि हम बच्चों की बात सुनने की आदत डालें। यह कहना आसान है, पर इसे करना इसलिए मुश्किल है क्योंकि बड़े यह मानकर चलते हैं कि उनका काम बच्चों को निर्देश देना है और बच्चों का काम सुनना है। बच्चों की बातचीत के अच्छे श्रोता बनने के रास्ते में यह मान्यता अड़चन पैदा करती है। अच्छे श्रोता से मेरा आशय एक ऐसे व्यक्ति से है जो बात के सूक्ष्म उद्‌देश्य और बातचीत के कारण पैदा हुई सीखने की सम्भावनाओं को धैयपूर्वक पहचान सके।

किसी भी आम स्थिति में, बातचीत में मस्त बच्चे ये दस क्रियाएँ करते नज़र आ सकते हैं :

1. जिस चीज़ पर अभी तक ध्यान नहीं दिया, उस पर ध्यान देना।
2. उसे मोटे तौर पर या बारीकी से देखना।
3. अपने अपने निरीक्षणों का आदान–प्रदान करना।
4. निरीक्षणों को तरतीब से लगाना।
5. दूसरे के निरीक्षण को चुनौती देना।
6. निरीक्षण के आधार पर तर्क करना।
7. भविष्यवाणी करना।
8. पिछले किसी अनुभव को याद करना।
9. दूसरे की भावनाओं या उसके अनुभवों की कल्पना करना।
10. किसी काल्पनिक स्थिति में स्वयं की भावनाओं की कल्पना करना।

अगर आप बच्चों की बातचीत को ध्यानपूर्वक सुनने की आदत डाल लें तो आप जल्दी ही इन दस और कई अन्य सम्भावनाओं में फर्क करने में समर्थ हो जाएँगे। आप यह भी समझने लगेंगे कि ये सम्भावनाएँ किस तरह विश्लेषण और तर्क करने की क्षमताओं के विकास से जुड़ी है। इस अध्याय में आगे चलकर दी गई गतिविधियाँ आपको इन क्षमताओं का विकास करने वाली परिस्थितियाँ गढ़ने में मदद देंगी।

बच्चों की बातचीत को शिक्षण सामग्री के तौर पर इस्तेमाल करने के इच्छुक अध्यापक को पहले बातचीत के लिए अनुकूल वातावरण पैदा करना होगा। अपने कार्य–व्यवहार और टीका–टिप्पणियों के ज़रिए अध्यापक को

बच्चों को यह विश्वास पैदा करना होगा कि वे बात करने के लिए स्वतंत्र हैं। इसका आशय अराजकता को न्यौता देना नहीं है। उलटे, ज़रूरत इस बात की है कि :

- **हर बच्चा यह महसूस करे कि जब वह कुछ कहेगा तो उसे सुना जाएगा और**
- **सभी बच्चे यह महसूस करें कि अध्यापक को उनका बोलना अच्छा लगता है।**

कक्षा में बच्चों को बातचीत के लिए प्रोत्साहित करने वाले अवसरों को हम पाँच कोटियों में रख सकते हैं :

1. अपने बारे में बात करने के अवसर देना

सब बच्चे अपनी जिन्दगी के बारे में उन घटनाओं के बारे में जो हो चुकी हैं और उनके बारे में भी जो अभी नहीं हुई हैं।बात करने को उत्सुक रहते हैं बशर्तें कि उन्हें इसके लिए प्रोत्साहन और मौका दिया जाए। कई अध्यापक बच्चों की व्यक्तिगत ज़िन्दगी और स्कूल में उनकी पढ़ाई के बीच कोई सम्बन्ध नहीं देख पाते। वे इस बात पर ज़ोर देते हैं कि कक्षा में सिर्फ पाठ्यपुस्तकों में दी गई सामग्री पर ही चर्चा हो। अध्यापक की इस मान्यता के कारण कई बच्चे कक्षा में किसी भी किस्म की हिस्सेदारी नहीं निभा पाते। अध्यापक जिन चीज़ों पर चर्चा करते हैं, वे बच्चों को आकर्षित नहीं कर पातीं, और बच्चों के व्यक्तिगत अनुभव (जैसे किसी रिश्तेदार का आना, आंधी और बारिश में घर की हालत, या बीमार पड़ना) अध्यापक को रास नहीं आते।

ऐसी स्थिति बच्चों को पाठ्यक्रम से एकदम काट देती है। अध्यापक चाहें तो उनके इस अलगाव को रोक सकते हैं। इसके लिए उन्हें बच्चों की घरेलू ज़िन्दगी और उनके पिछले अनुभवों की चर्चा के अवसर पैदा करने होंगे। यदि बच्चों को इन चीज़ों पर बात करने के लिए प्रोत्साहित किया जाए तो धीरे–धीरे वे कई तरह के अनुभवों से जुडे भावों और विचारों को प्रकट करने में समर्थ हो जाएंगे। । साथ ही वे स्कूल के पाठ्यक्रम के विभिन्न विषयों (जैसे विज्ञान, भूगोल, नागरिक शास्त्र) में शामिल ज्ञान से एक गहरे, व्यक्तिगत स्तर पर सम्बन्ध बना सकेंगे।

2. स्कूली अनुभवों पर बात करने के अवसर देना

स्कूल का परिवेश खोजबीन और निरीक्षण का एक शानदार माध्यम है।स्कूल कहीं भी हो, उसके इर्दगिर्द ऐसी कई छोटी–छोटी चीज़ें होती हैं जिनसे विस्तृत जाँच और बहस की सामग्री मिलती है। दुकानें, पेड, पत्थर, मकान, सड़क, बाड़, मिट्टी, फाटक, घोंसले, छत्ते, फूल, तितलियाँ, खुली नाली, नल और तमाम चीज़ें स्कूल के पड़ोस में ढूँढ़ी जा सकती हैं और बारीक अवलोकन, अवलोकनों के आदान–प्रदान, सच के निर्धारण और दूसरी चीज़ों से उसके सम्बन्ध की खोज के लिए काम में लाई जा सकती है।

छोटे बच्चों के साथ यह सब करने के लिए बातचीत एक उम्दा माध्यम है। जैसा कि आगे दी गई गतिविधियों से स्पष्ट होगा, यह कतई ज़रूरी नहीं कि अध्यापक बहुत सारे बच्चों को औपचारिक रूप से

भ्रमण के लिए ले जाए। दरअसल तीन–चार बच्चों को किसी चीज़ की रपट लिखने के लिए भेजना उपयोगी हो सकता है। यह ज़रूर है कि भ्रमण में खूब मज़ा आता है, अतः जो अध्यापक बच्चों को स्कूल से दूर किसी जगह पर ले जाने का खर्च उठा सकते हों, उन्हें ऐसा अवश्य करना चाहिए। पर जो अध्यापक बच्चों को किसी संग्राहलय या डाकखाने तक नहीं ले जा सकते, उन्हें इस बात का बहाना नहीं बनाना चाहिए कि वे बच्चों को स्कूल के करीब एक टूटी पुलिया या स्कूल के पिछवाडे गन्दे पानी की निकासी तक भी नहीं ले जा सकते। महत्वपूर्ण चीज़ यह है कि सभी बच्चों को भ्रमण में देखी गई सब चीज़ों पर बात करने का पर्याप्त अवसर मिले।

3. तस्वीरों पर चर्चा करना

ऐसी बातचीत जो सर्जना और विश्लेषण को प्रोत्साहित करती हो, तस्वीरों के ज़रिए अच्छी तरह की जा सकती है। तस्वीरें कैसी भी हो सकती हैं– अखबारों और पत्रिकाओं के विज्ञापनों या खबरों के साथ छपे चित्र, कैलेंडरों, टिकटों, लेबलों और पोस्टरों पर छपे चित्र। ये सभी काम में लाए जा सकते हैं। इस प्रकार तस्वीरों के स्रोत बहुत व्यापक हैं और किसी छोटे गाँव में भी ढूँढे जा सकते हैं। अध्यापक साल दर साल इस्तेमाल के लिए तस्वीरों का एक संग्रह बना सकता है।

इन स्रोतों के अलावा स्कूलों को थोडा अतिरिक्त पैसा खर्च करके तस्वीरों वाला बाल–साहित्य खरीदने की कोशिश करनी चाहिए। सुरुचिपूर्वक छापा गया साहित्य भारत की सभी भाषाओं में उपलब्ध है लेकिन प्रायः देखा गया है कि अध्यापकों का इस साहित्य से कोई वास्ता नहीं होता। स्कूल में यदि कुछ बाल साहित्य है भी तो उसका इस्तेमाल इस डर से नहीं किया जाता कि किताबें खराब हो जाएँगी। बाल साहित्य का अपने शिक्षण में प्रयोग करने के इच्छुक अध्यापकों को चाहिए कि किताबों की देखदेख के काम में बच्चों को शामिल करें और उन्हें इसकी ट्रेनिंग दें कि किताब को कैसे उठाना–रखना है, कोने मोडे या थूक लगाए बिना पन्ना कैसे पलटना है। ऐसी छोटी–छोटी चीज़ें आगे जाकर बच्चों में किताबों के प्रति आदर पैदा करेंगी और उन्हें सीखने का साधन मानने की प्रवृत्ति विकसित करेंगी। ये चीज़ें बच्चे में चीज़ों को सहेज कर रखने को प्रवृत्ति का विकास करने में मदद देंगी।

बच्चों के बीच बैठकर बगैर किसी तैयारी के, बिलकुल अनौपचारिक ढ़ंग से किसी तस्वीर के बारे में बातचीत करना भी उपयोगी सिद्ध हो सकता है। लेकिन यदि हम देखने के विभिन्न पहलुओं के बारे में सचेत हो जाएँ तो बच्चों की भाषा के विकास की दृष्टि से हम ऐसी बातचीत को और भी अधिक उपयोगी बना सकते हैं। अध्यापक का हर प्रश्न बच्चों की प्रतिक्रिया को एक निश्चित ढंग से प्रभावित करता है। सवालों के

जरिये बच्चों की निगाह और प्रतिक्रिया को विस्तार देने की क्षमता हम किस प्रकार हासिल कर सकते हैं? प्रतिक्रिया के स्तर, जिनकी तरफ बच्चों का ध्यान हम प्रश्नों की मदद से मोड़ सकते है, ये रहें:

अ. **ढूँढना:** इस स्तर पर हम बच्चों से केवल इतना कहेंगे कि वे चित्र में दिखाई गई चीज़ों को ढूँढ़ें। हम इस तरह के प्रश्न पूछ सकते हैं: इस चित्र में क्या है? क्या इस चित्र में एक चूहा है? साइकिल पर कौन बैठा है?लड़का कितना बड़ा है?

ब. **तर्क करना:** प्रतिक्रिया के इस स्तर का सम्बन्ध कारण बताने की क्षमता से है। चित्र में दिखाई गई किसी बात का जो भी कारण बच्चा बताए, अध्यापक को उसे स्वीकार करना चाहिए। अध्यापक स्वयं भी कारण बता सकता है – पर केवल एक सम्भव उत्तर के तौर पर, अन्तिम उत्तर के तौर पर नहीं। प्रश्नों के उदाहरण: नन्हीं लड़की क्यों रो रही है ? मोटर साइकिल का पिछला हिस्सा हमें दिखाई क्यों नहीं दे रहा? चूहा क्यों छिपा है?

स. **आरोपण:** इस स्तर पर हम बच्चे से खुद को चित्र में आरोपित करने को कहते हैं। अतः इस स्तर पर प्रश्न पूछने का उद्देश्य बच्चे को एक कल्पित स्थिति में स्वयं को डालने, कौन क्या कहेगा, यह कल्पना करने और उन्हें कैसा लगेगा यह सोचने को प्रोत्साहित करना है। प्रश्नों के उदाहरण: यदि तुम इस पेड़ पर बैठे होते तो तुम्हें कैसा–क्या दिखाई देता? छोटी लड़की साइकिल पर बैठे आदमी से क्या कह रही है? चूहा क्या सोच रहा है?

द. **भविष्यवाणी:** इस स्तर का सम्बन्ध चित्र में दिखाई गई स्थिति के बाद की घटनाओं का अनुमान करने से है। बच्चों को यह सोचने के लिए प्रेरित करना है कि अब आगे क्या होगा। प्रश्नों के उदाहरण : यह आदमी अब कहाँ जाएगा?' 'नन्हीं लड़की घर पर क्या करेगी?'

इ. **सम्बन्ध बैठाना :** अब हम ऐसे प्रश्न पूछेंगे जो बच्चों को चित्र में दिखाई गई स्थिति से मिलती–जुलती कोई चीज़ अपनी ज़िन्दगी में ढूँढने को प्रेरित करें। प्रश्नों के उदाहरण : तुम कभी मोटर–साइकिल पर बैठे हो? बैठकर कैसा लगता है?क्या तुम कभी किसी अजनबी के साथ रहे हो?उस दिन फिर क्या हुआ?

4. कहानियाँ सुनना और उन पर चर्चा करना

कोई कहानी सुनते वक्त हमारा ध्यान उसमें चित्रित घटनाओं और चरित्रों की तरफ भागता है। कई कहानियों का सम्बन्ध हमारी देखी हुई घटनाओं से नहीं होता, पर हम उनकी कल्पना कर लेते हैं। इसी तरह भले ही हमने कहानी के चरित्रों जैसे लोग कभी न देखे हों, फिर भी हम उनकी तस्वीर मन से बना

लेते हैं। इस प्रकार अपरिचित घटनाएँ और लोग दुनिया के उस नक्शे में शामिल हो जाते हैं जो हमने अपने दिमाग में बना रखा है। बाद में इन घटनाओं की हम ठीक उसी तरह चर्चा कर सकते हैं जिस तरह अपनी ज़िन्दगी में सचमुच घटी घटनाओं की चर्चा करते हैं। फिल्मों, किताबों और अखबारों में छपी अधिकांश खबरों की चर्चा लोग इसी तरीके से करते हैं। कहानी चाहे किसी असली घटना के बारे में हो या किसी के द्वारा कल्पित घटना के बारे में, वह एक नई सामग्री हमारे ध्यान में लाती है और हम इस सामग्री को बगैर ज़्यादा कोशिश या परेशानी के अपने मन में जगह दे देते हैं। कहानी सुनते समय हम घटनाक्रम और चरित्रों के व्यवहार की कल्पना करते चलते हैं। दूसरी तरफ जब हम स्वयं कोई कहानी सुनाते हैं तो उसमें शामिल अनुभवों को व्यवस्थित करते चलते हैं। ये अनुभव वास्तविक हो तो उन्हें ज्यों का त्यों रखने की कुछ चिन्ता अवश्य होती है। पर ऐसा कम ही होता है कि कोई अपने अनुभव को एकदम हू–ब–हू सुना सके। छोटी–मोटी फेरबदल हो ही जाती है क्योंकि कुछ बातें हमें दूसरी बातों से ज़्यादा महत्वपूर्ण लगती हैं। यदि हमारी कहानी वास्तविक अनुभवों के बारे में न हो तो हम उसे कुछ ज़्यादा आज़ादी से प्रस्तुत करते हैं। शायद तब हमारा मुख्य उद्‌देश्य अपने श्रोता की दिलचस्पी जगाना होता है। कहानी चाहे असली हो या काल्पनिक, उसमें दो चीज़ें अवश्य रहती है :

- जीवन की घटनाओं, चरित्रों आदि का पुनर्योजन, और
- सुनने वाले का ध्यानाकर्षण।

ये दोनों बातें भाषा के कुशल इस्तेमाल पर निर्भर है। दरअसल हरेक कहानी हमसे भाषा की चतुरता की माँग करती है और कहानियाँ सुनने का अनुभव हमें भाषा के चतुर कौशल के नमूने देता है। इसी कारण कहानी कहना नन्हें बच्चों के अध्यापक के लिए एक बढ़िया साधन है। कुछ अध्यापक कहानी सुनाने को एक कला मानते हैं। वे सोचते हैं कि इनेगिने लोग ही अच्छी तरह कहानियाँ सुना सकते हैं। यह एक दुर्भाग्यपूर्ण मान्यता है क्योंकि इसकी वज़ह से बच्चे कहानियाँ सुनने के आनन्द से वंचित रह जाते हैं यदि कोई कहानी अच्छी है तो बच्चे उसे सुनकर ज़रूर खुश होंगे। कहने का कौशल तो समय और अभ्यास से ही आएगा। असली बात है अच्छी कहानियाँ चुनना और उन्हें बार–बार सुनाना। कोई कहानी सिर्फ एक बार सुनाने के लिए नहीं होती और अच्छी कहानियाँ तो ढ़ेरो बार सुनाने लायक होती हैं।

कहानी सुनाकर उस पर चर्चा करना ज़रा टेढ़ा मामला है। अनेक अध्यापक जो कहानी से मिलने वाली सीख की चर्चा करने को उत्सुक रहते हैं। कहानी समाप्त होते ही वे पूछ उठते हैं: इस कहानी से तुम्हें क्या शिक्षा मिली? एक सार्थक संवाद की शुरुआत के लिए यह प्रश्न बिलकुल बेकार है। कहानी के नैतिक मूल्य का (यदि कहानी में ऐसा कोई मूल्य है) बच्चों के लिए कोई विशेष आकर्षण नहीं होता। उनके लिए तो कहानी का ही महत्व होता है। नैतिक मूल्य के बारे में पूछने वाला अध्यापक अपनी ही मेहनत को गुडगोबर

कर देता है। इतनी ही फ़िज़ूल उन अध्यापकों की माँग होती है जो कहानी ज़्यो की त्यों याद करने पर ज़ोर देते हैं। वे चाहते हैं कि बच्चे पूरी कहानी हू–ब–हू सुना दें। वे यह माँग इतने नियमित रूप से करते हैं कि बच्चे कहानी का आनन्द लेना छोड़ अपने ऊपर लादी जाने वाली माँग की चिन्ता में डूब जाते हैं।

कहानी सुनाते वक्त श्रोता के लिए महत्वपूर्ण चीज़ कहानी से अपना सम्बन्ध स्थापित करना है, और हमें यह समझना चाहिए कि हर बच्चा यह सम्बन्ध एक अलग ढंग से स्थापित करता है। उसका व्यक्तित्व और उसके पिछले अनुभव कहानी के प्रति बच्चे की प्रतिक्रिया को प्रभावित करते हैं। हो सकता है कि बच्चा किसी चरित्र की कल्पना कहानी में दिए विवरण से एकदम अलग रूप में करे। सम्भव है कि उसे कोई घटना भावनात्मक रूप से बाकी सब घटनाओं से ज़्यादा सार्थक लगे। कहानी और उसके चरित्रों की ऐसी पुनर्रचना करना, जो स्वयं को सार्थक लगे, हर बच्चे का मौलिक अधिकार है। उदाहरण के लिए, हो सकता है कि बच्चा पृष्ठ छह पर दी गई कहानी में अध्यापक की कल्पना एक महिला के रूप में करे। ऐसा अध्यापक, जो चरित्रों की कल्पना किसी भी ढंग से करने के बच्चे के अधिकार को स्वीकार करता है, बच्चों को इस बात की पूरी आज़ादी और अवसर देगा कि वे कहानी के बारे में किसी भी तरह से बात करें – उसे तोड़े–मरोड़े, उसे बढ़ाएँ, उसके चरित्रों की अदला–बदली करें या स्वयं कहानियाँ गढ़ें। ऐसे अवसर कहानी कहने के फौरन बाद देना ज़रूरी नहीं है। प्रायः ठीक यही रहता है कि कहानी सुनाने के बाद कोई और एकदम अलग गतिविधि शुरू हो जाए।

कहानी कोष

कई शिक्षक बच्चों को सुनाने लायक कहानियों की कमी महसूस करते हैं। कभी–कभी ये पत्रिकाओं या अखबारों में छपी छोटी–मोटी कहानीनुमा रचनाएँ सुनाकर सन्तोष कर लेते हैं। पचास–साठ अच्छी यानी सुनाने लायक कहानियों का व्यक्तिगत कोष बनाकर उनको याद कर लेना शिक्षक के लिए कठिन नहीं है। ऐसा कोष बनाने के लिए कहानियों का चयन इन स्रोतों से किया जा सकता है :

- पंचतंत्र, कथासरित्सागर, जातक, महाभारत, बेताल पच्चीसी, सिंहासन बत्तीसी और पौराणिक कहानियाँ,
- देश और दुनिया के विभिन्न हिस्सों को लोककथाओं के संग्रह,
- अपने इलाके की लोककथाएं – इन्हें इकट्ठा करने के लिए बूढ़े लोगों की मदद ली जा सकती है;
- ऐतिहासिक कहानियाँ
- कहानी बनाने लायक पुरानी स्थानीय घटनाएँ।

5. अभिनय करना

कहानी और नाटक में सम्बन्ध है, इसलिए अध्यापक आसानी से एक को दूसरे को जोड़ सकता है। कहानी को ध्यानपूर्वक सुन रहा बच्चा उसमें चित्रित भूमिकाओं को चुपचाप ग्रहण कर रहा होता है। यही चीज़ नाटक में होती है, पर अधिक मुखर रूप में नाटक में बच्चों को विभिन्न भूमिकाओं को बातचीत, हाव–भाव और शरीर के ज़रिए प्रस्तुत करने का मौका मिलता है। कहानी के श्रोता की तरह नाटक में भाग लेते वक्त भी उन्हें स्वयं को किसी दूसरे पर आरोपित करना होता है और उसकी निगाह से चीज़ों को देखना होता है। फर्क यही है कि नाटक में यह ज़्यादा सक्रियता पूर्वक करना होता है, कल्पित स्थिति और चरित्रों के अनुभव शब्द और हाव–भाव ढूँढने पड़ते हैं। इस सब में तुरतबुद्धि से अभिनय करने के लिए सुनहरा मौका रहता है जो नाटक को बातचीत के विस्तार के लिए इस्तेमाल करने का मुख्य आधार है।

दुर्भाग्यवश स्कूलों में होने वाली ज़्यादातर गतिविधियों में तुरतबुद्धि के लिए जगह नहीं होती। बच्चों को निश्चित भूमिकाएँ दे दी जाती हैं और उन्हें संवाद याद करने को कह दिया जाता है। नाटक का उपयोग किसी त्यौहार या अतिथि के आगमन जैसे खास अवसरों के लिए किया जाता है। नाटक के इस उपयोग के भी कुछ न कुछ फायदे तो होंगे ही, पर इससे बच्चों की भाषा के विकास में कोई खास मदद नहीं मिलती। थोड़े–से बच्चे ही नाटक में हिस्सा लेते हैं, बाकी सिर्फ देखते हैं। तैयारी और अन्तिम प्रदर्शन के दौरान लगातार सबको यह डर बना रहता है कि कोई गलती न हो जाए। ऐसे नाटकों में आज़ादी और आनन्द की गुँजाइश नहीं रह जाती। एक भाषायी गतिविधि के रूप में नाटक के इस्तेमाल के लिए ये दो चीज़ें–आज़ादी और आनन्द–बहुत ज़रूरी हैं।

जो अध्यापक नाटक का भाषा शिक्षण में उपयोग करना चाहते हैं, उन्हें याद रखना चाहिए कि नाटक बच्चों के लिए कोई विशेष या निराली चीज़ नहीं है– वह तो उनकी ज़िन्दगी का भाग है। नकल उतारना, किसी चीज़ को बढ़ा–चढ़ाकर बताना, स्वांग करना जैसी नाटकीय युक्तियों का प्रयोग बच्चे करते ही रहते हैं। बच्चों के अपने पारम्परिक खेलों में भी नाटक का एक विशेष स्थान रहता है। ऐसा बच्चा मुश्किल से मिलेगा जिसमें नाटकीय कौशल न हो। पर अनेक बच्चे अपने नाटकीय कौशल का कक्षा में प्रयोग करने को उत्सुक नहीं होते। उन्हें लगता है कि कक्षा इसके लिए ठीक जगह नहीं है। ऐसा माहौल बनाने की कोई एक तकनीक नहीं है। आप इसके लिए धीरे–धीरे प्रयास कर सकते हैं। और इसके लिए ज़रूरी है कि आप बच्चों को स्वाभाविक रूप से यथार्थ ज़िन्दगी के बारे में बात करने को प्रोत्साहित करें, बच्चों की बातचीत को ध्यान लगाकर सुनें और मधुर व्यवहार करें।

दूसरी खास बात यह है कि प्रदर्शन के लिए नाटक करने और नाटक के रोज़मर्रा के इस्तेमाल में अन्तर है। हमारा विषय रोजमर्रा का नाटक है और उसके लिए पहले से तैयार पटकथा, संवाद, पोशाकें, रिहर्सल और रोशनी की व्यवस्था बेमानी है। अभिनय के लिए किसी भी घटना की कहानी पर्याप्त है। नाटकीय कहानियों के सबसे अच्छे उदाहरण आपकी प्रायः बच्चों की बातों से मिल सकते हैं, बशर्ते कि बच्चे जो रोज़ देखते, महसूस करते हैं उसके बारे में बात करने की स्वतंत्रता वे अनुभव करते हों।

बस कैसे रुकी, कुछ लोग उतरे, कुछ चढ़े, बस फिर से कैसे चली और इस समय उसके अन्दर क्या हो रहा है– यह कक्षा के पूरे 40 बच्चों के अभिनय करने लायक बढ़िया कथानक है। दूसरी तरफ अध्यापक द्वारा सुनाई या पढ़ी गई कहानियाँ भी नाटक के लिए ज़ोरदार सामग्री दे सकती हैं। यदि कहानी में थोड़े–से चरित्र हैं तो पाँच–पाँच बच्चों की टोलियाँ उस पर अलग–अलग काम कर सकती हैं या उन्हें अलग–अलग कहानियाँ दे दी जाएँ। टोलियों में प्रतियोगिता करवाने की कोई तुक नहीं है। इससे अनावश्यक बेचैनी और अध्यापक पर निर्भरता पैदा होगी।

यदि आप छोटी उम्र से ही स्वतः स्फूर्त नाटक का इस्तेमाल शुरू कर देते हैं तो वह पढ़ने के कौशल के विकास की नींव का काम करेगा। नाटक करने तथा पढ़ने में सीधा रिश्ता न हो, पर रिश्ता है। नाटक शब्दों और शरीर की भंगिमाओं (हावभाव, झुकना आदि) को सचेत होकर प्रतीकों की तरह उपयोग करने का एक विशिष्ट मौका देता है कहानी सुनने की तरह अभिनय करते समय भी बच्चे दुनिया की दिनचर्या में प्रतीक रूप से हिस्सा लेते हैं– यानी वे घटनाओं में सीधे उपस्थित हुए बगैर उनमें हिस्सा लेते हैं। यही क्षमता एक अच्छे पाठक में होती है। जो चीज़ें उसकी आँखों के आगे मौजूद नहीं हैं, उन्हें यह देखता चलता है और उस पर इस तरह प्रतिक्रिया करता चलता है मानो वे उसके सामने मौजूद हों।

अध्यापक की प्रतिक्रिया

स्कूल में दाखिल होने तक बच्चे अपनी मातृभाषा की बुनियादी संरचनाओं पर अच्छा–खासा अधिकार पा चुके होते हैं। उन्हें न केवल तमाम तरह के कार्यों के लिए भाषा का प्रयोग करना होता है, बल्कि वे यह भी खूब समझ चुके होते हैं कि भिन्न–भिन्न संदर्भों और श्रोताओं के हिसाब से भाषा को समन्वित करना कितना ज़रूरी है। पाँच वर्ष का बच्चा संदेशों को कार्य में बदलना (जैसे, कहने पर पानी का गिलास लाना और उसे वापस सही जगह रखना) जानता है। वह लोगों की बातचीत की सहायता से उनके चरित्र और आपसी रिश्तों का अनुमान भी कर लेता है। छोटे बच्चे को ये क्षमताएँ किसी के सिखाने से नहीं, रोज़ाना के जीवन से प्राप्त होती हैं। बच्चे के आसपास जो कुछ हो रहा होता है, वह उसे अपनी सोच–विचार की छलनी से छानकर अपने भाषा–संयंत्र का हिस्सा बना लेता है।

हमें ये क्षमताएँ स्वयं हासिल करने का श्रेय बच्चे को देना चाहिए। हम बच्चे को कोई बिलकुल नई चीज़ नहीं दे सकते। केवल ऐसी परिस्थितियाँ बना सकते हैं जिनमें बच्चा अपनी मौजूदा क्षमताओं का और विकास कर सके। बातचीत के संदर्भ में ऐसी परिस्थितियाँ रचने की मुख्य शर्त है बच्चे की बात पर अपनी प्रतिक्रिया के प्रति सचेत होना। हर बार बच्चे की बात सुनते समय हमें चाहिए कि :

- उसे पूरी बात कहने दें,
- वह जो कह रहा है उसमें रुचि लें,
- मतभेद व्यक्त करने की इच्छा हो ता उस पर काबू करें,
- बच्चे ने जो कहा है उस पर अपनी प्रतिक्रिया विस्तार से यानी, और ज़्यादा समृद्ध वाक्य रचना का प्रयोग करते हुए दें। इतना कहना काफी नहीं है कि 'अच्छा' या 'यह अच्छा है।' उदाहरण के लिए यदि बच्चे ने कहा, 'गिलहरी पेड़ पर' तो अध्यापक की प्रतिक्रिया हो सकती है: 'उसने गिलहरी को पेड़ पर चढ़ते देखा?'
- घटना और जानकारी माँगे या बच्चे का ध्यान विषय के किसी नए पहलू की तरफ खींचे।

बच्चों से इस तरह बात करने के लिए काफी अभ्यास ज़रूरी है। सबसे ज़रूरी यह महसूस करना है कि बातचीत बच्चे के लिए सीखने का एक महत्वपूर्ण साधन है और उसका बच्चे के सामाजिक व्यवहार और व्यक्तित्व पर गहरा असर पड़ता है।

अक्सर चुप रहने वाले बच्चे अध्यापक के लिए दिक्कत पेश कर सकते हैं सम्भव है कि आपकी कक्षा के कुछ बच्चे बात करने की अपेक्षा खेलने या चीज़ें बनाने में, ज़्यादा दिलचस्पी दिखाएँ। लेकिन यदि कोई बच्चा अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करने, सवाल पूछने और दूसरों को यह बताने के लिए कि वह क्या कर रहा है, बिलकुल उत्सुक न हो तो ऐसे बच्चे की ओर कुछ विशेष ध्यान देना बुद्धिमानी का काम होगा। मुमकिन है कि उसे घर पर नाना प्रकार से हतोत्साहित किया गया हो या उस पर दबाव डाले गए हों, चुप्पी उसके व्यक्तित्व, विशेषतया दूसरों के संदर्भ में उसकी आत्मछवि को पहुँची चोट की एक अभिव्यक्ति हो सकती है। घर के दमघोंटू माहौल का असर काफी गहरा होता है। पर उसे दूर करना असम्भव नहीं है। एक संवेदनशील अध्यापक, जो समस्या की जड़ को समझता हो, दुनिया के साथ बच्चे के सम्बन्धों में चमत्कारपूर्ण परिवर्तन ला सकता है।

कुछ गतिविधियाँ

यहाँ केवल थोड़ी–सी गतिविधियाँ दी गई हैं जिन्हें कोई भी अध्यापक एक साधारण कक्षा में आयोजित कर सकता है। हर बार किसी गतिविधि में थोड़ी–सी फेरबदल करने से बच्चे पिछली बार के मुकाबले और ज़्यादा उत्साह महसूस करेंगे। इसलिए इन गतिविधियों को बार–बार कीजिए और हर बार इनमें कुछ नया जोड़िए। आप जो चीज़ें जोड़ें उनका ब्यौरा रखिए ताकि आप किसी नए सहयोगी को अपने प्रयोगों की जानकारी दे सकें। यहाँ दी गई लगभग हरेक गतिविधि दर्जनों नई सम्भानाओं की शुरुआत बन सकती है।

1. **क्या देखा?**

   पहला चरण : एक बच्चे से कहिए कि वह बाहर जाए, देखे कि बाहर क्या हो रहा है और लौटकर दूसरों को बताए। उदाहरण के लिए वह बताएगा कि उसने एक ठेला, दो दुकानें और एक साइकिल देखी।

   दूसरा चरण : अब बाकी बच्चे उससे सवाल पूछेंगे बच्चे गोल घेरे में बैठें और एक बच्चा एक ही सवाल पूछे। उदाहरण के लिए एक बच्चा पूछ सकता है, 'साइकिल के हैंडिल से क्या लटका था?' जवाब है, 'एक टोकरी लटकी थी।' 'अगला सवाल, 'टोकरी का रंग कैसा था।'

   तीसरा चरण : जब **सारे** बच्चे एक–एक सवाल पूछ लें तो अध्यापक उस बच्चे से पूछे जो बाहर गया था कि उसे कौन–सा प्रश्न सबसे अच्छा लगा। मान लीजिए कि उसका जवाब हो–'शशि का सवाल सबसे अच्छा था'–तो अगला सवाल पूछिए : 'वह सवाल क्या था?'

   चौथा चरण : अब खेल के अगले दौर की शुरुआत शशि से होगी। उससे कोई ऐसी चीज़ देखने को कहिए जो पहले बच्चे ने नहीं देखी थी। शशि के वापस आने पर बच्चों से कहें कि वे नए सवाल पूछें–ऐसे सवाल जो पहले किसी ने नहीं पूछे।

2. **खोजियों की खबर**

   पाँच या छह बच्चों की टोली को स्कूल की इमारत के आसपास या भीतर किसी निश्चित चीज़ या जगह का अध्ययन करने के लिए भेजिए। जैसे वे पेड़ों के एक झुण्ड, चाय की गुमटी, टूटे हुए पुल या घोंसले का मुआयना करने जा सकते हैं। उनसे कहिए कि वे सावधानी से उस चीज़ की खोजबीन करें और अपने निरीक्षणों की आपस में चर्चा करें।

   जिस समय खोजी–दल बाहर गया हो, बाकी बच्चों को उस चीज़ के बारे में विस्तार से बताएँ। जैसे यदि खोजी–दल चाय की गुमटी का अध्ययन करने गया है, तो बच्चों को बताएँ कि वहाँ क्या–क्या चीज़ें उपलब्ध हैं (बच्चों से पूछें भी), उसे कौन चलाता है, वहाँ उपलब्ध चीज़ें कहाँ–कहाँ से आती हैं, आदि।

वापस आने पर खोजी–दल कक्षा के सवालों का सामना करे। प्रश्न पूछने में अध्यापक की बारी भी आनी चाहिए।

अगली बार किन्हीं और बच्चों का खोजी–दल बनाइए।

3. बूझो, मैंने क्या देखा?

एक बच्चा बाहर जाए, दरवाज़े पर या कक्षा से कुछ दूर खड़े होकर आसपास दिखाई दे रही सैकड़ों चीज़ों में से कोई एक चुन लें। वह चीज़ कुछ भी हो सकती है– पेड़, पत्ता, गिलहरी, चिड़िया, तार, खम्भा, पत्थर। लौटकर वह उस चीज़ के बारे में सिर्फ एक वाक्य बोले, जैसे, 'मैंने एक भूरी चीज़ देखी।'

अब इस बच्चे से एक प्रश्न पूछकर उस चीज़ का अनुमान लगाने का मौका कक्षा के हर बच्चे को मिलेगा। उदाहरण के लिए–पहला बच्चा : 'क्या वह पतली है?'

उत्तर 'नहीं'।

दूसरा बच्चा : 'वह कितनी बड़ी है?'

उत्तर : 'वह काफी बड़ी है।'

तीसरा बच्चा : 'क्या वह कुर्सी जितनी बड़ी है?'

उत्तर : 'नहीं, कुर्सी से छोटी है।'

चौथा बच्चा : 'क्या वह मुड़ सकती है?'

अन्त में सही अनुमान लग चुकने के बाद कुछ बच्चों को अपने प्रश्नों के उत्तरों से आपत्ति हो सकती है। उदाहरण के लिए किसी की यह आपत्ति हो सकती है कि रंग भूरा नहीं, मिट्टी जैसा था। ऐसी स्थिति में बारीक अन्तर देख पाने में अध्यापक को बच्चों की मदद करनी होगी।

4. जो कहा सो करना:

बच्चों से कहिए कि वे ध्यान से सुनें और जो बताया जाए उसे करें। पहले एकदम सरल निर्देश दीजिए और पूरी कक्षा से निर्देश का एक साथ पालन करने को कहिए।

उदाहरण :

'अपना सिर छुओ।'

'अपनी दाहिनी आँख बन्द करो।'

'सिर पर ताली बजाओ।'

कक्षा को दो समूहों में बाँट दीजिए। आप पहले समूह को निर्देश देंगे और इस समूह के बच्चे दूसरे समूह को वही या मिलते–जुलते निर्देश देंगे।

'दोनों हाथ से अपना सिर छुओ, फिर दाहिने हाथ से दाहिना कान छुओ।'

'दोनों आँखें मीचो, अपने पड़ोसी को छुओ, उससे कहो कि निर्देश दे रहे हों तो यह ज़रूरी नहीं कि वे अध्यापक के निर्देश को ज़्यो का त्यों दुहराएँ। उन्हें ताज़े निर्देश रचने के लिए प्रोत्साहित कीजिए।

5. **तुलना:**

एक जैसी दिखने वाली चीज़ों के जोड़े बनाइए, जैसे दो पेड़ों की पत्तियाँ, अलग–अलग पौधों के फूल, अलग–अलग आकार में काटे गए कागज के टुकड़े।

बच्चों को बताइए कि आप जोड़े की एक चीज़ का वर्णन करेंगे और वर्णन ध्यान से सुनकर उन्हें यह अनुमान लगाना है कि आप किस चीज़ की चर्चा कर रहे थे। उदाहरण : 'मैं जिस पत्ती के बारे में सोच रहा हूँ, वह लम्बी और चिकनी है और उसकी किनार सीधी है।'

यह गतिविधि आठ–दस बार करने के बाद वर्णन करने का काम बच्चों को सौंप दीजिए। हर बार यह गतिविधि करते वक्त चीज़े, बदल दीजिए। हर बार वर्णन के लिए और बारीक बातें चुनिए।

6. **कहानी बनाना:**

बोतलों और डिब्बों के ढक्कन, कपड़े के टुक़ड़े, छोटे छोटे पत्थर, पत्तियाँ, और इस तरह की तमाम चीज़ें इकट्ठी कर लीजिए। पाँच–पाँच या छह चीज़ों की ढेरियाँ बनाकर पाँच–पाँच की हरेक टोली को एक ढेरी दे दीजिए। हर टोली को एक जगह बैठकर चीज़ों पर चर्चा करनी है और लगभग पन्द्रह–बीस मिनट में एक कहानी गढ़नी है। सारी टोलियों के लौटने पर हर टोली में से एक बच्चा कहानी सुनाएगा। यदि टोली के अन्य सदस्य कोई फेरबदल करना चाहें, तो उन्हें खुशी से ऐसा करने दीजिए।

इस गतिविधि की सफलता इस बात पर निर्भर है कि आपके बच्चों को कहानियाँ सुनाने का कितना अनुभव है? साथ ही यह इस बात पर भी निर्भर है कि क्या वे किसी भी घटना को कहानी की तरह सुना सकते हैं? कोई भी घटना या वस्तु एक दिलचस्प कहानी की बुनियाद बन सकती है। यदि आप कल्पना और सूझबूझ से काम लेंगे तो यह आदत शीघ्र ही आपके बच्चों में भी पड़ जाएगी।

7. **तुम कहाँ रहते हो?**

बच्चे दो पंक्तियों में आमने–सामने बैठते हैं। एक पंक्ति 'बताने वालों' की है, दूसरी 'सुनने बालों' की। पहली पंक्ति में बैठे हर बच्चे को अपने सामने बैठे बच्चे को समझना है कि वह अपने घर कैसे जाता है। रास्ते को अच्छी तरह समझने के लिए सुनने वाला कितने ही सवाल पूछ सकता है।

उदाहरण :

बताने वाला : 'सीधे जाकर मुड़ जाओ।'

सुनने वाला : 'कितनी दूर तक सीधे जाना है?'

बताने वाला : 'कूड़े के ढेर तक। वहाँ से मुड़ना हैं'

सुनने वाला : 'दाहिने मुड़ना है कि बाएँ।'

बताने वाला : 'दाहिने, नहीं, नहीं, बाएँ।'

जब सभी बताने वालों की बारी आ चुके तब सुनने वाले बताने वाले बन जाएँ और खेल फिर शुरू।

इस सबसे क्या होगा?

यहाँ दी गई सभी गतिविधियों का लक्ष्य यह है कि अपने आसपास की दुनिया से सम्बन्ध स्थापित करने की बच्चे की क्षमता का विकास हो। यद्यपि इन गतिविधियों का केन्द्र बातचीत है, दरअसल बच्चों के विकास की दृष्टि से उनका संदर्भ बहुत व्यापक है। इस व्यापक संदर्भ में ये चीज़ें शामिल है :

- सीमित जानकारी के आधार पर होशियारी से अनुमान लगाना
- चीज़ों से एक से अधिक स्तर पर सम्बन्ध स्थापित करना
- मौलिक व्याख्या करना
- नई जानकारी पाने के लिए प्रश्न पूछना

कुछ गतिविधियाँ ऐसी हैं जो एक से अधिक माध्यम में काम करने का मौका देती है– एक माध्यम शब्दों का और दूसरा चित्रों का। यह सम्भावना अमूर्त और मूर्त प्रतीकों को जोड़ने की सामर्थ्य का विकास करने में सहायक हो सकती है। एक पाठक के रूप में बच्चे के विकास में यह महत्वपूर्ण योगदान होगा।

इन गतिविधियों और इनसे प्रेरित उन तमाम प्रेरित उन तमाम सम्भावनाओं को, जिन्हें आप स्वयं रचेंगे, अगले दो अध्यायों में दी गई गतिविधियों से जोड़ने के कई उपयुक्त बिन्दु आपको आसानी से नज़र आएँगे। पढ़ने की क्षमताएँ, जो अगले दो अध्यायों का विषय है, बच्चे के भाषायी भण्डार को कितना ही बढ़ाती हों, बातचीत हमेशा दुनिया से रिश्ता जोड़ने का बुनियादी माध्यम रहेगी। अतः बच्चे जब पढ़ना–लिखना सीख लें, तब भी बातचीत गतिविधियाँ ज़ारी रहेगी।

पठन सामग्री

पहला दिन

सत्र–4 : पढना सिखाने की शुरुआत

पहली कक्षा के शिक्षकों में यह मान्यता बैठी हुई है कि पढ़ना सिखाने की शुरुआत वर्ण–परिचय से होनी चाहिए। इस मान्यता के चलते वे पहली कक्षा की पाठ्यपुस्तक रिमझिम (एन.सी.ई.आर.टी द्वारा प्रकाशित कक्षा एक की हिंदी की पाठ्यपुस्तक) में शुरुआत से ही मात्रा वाले शब्द देखकर परेशान हो जाते हैं वे पूछते हैं कि जब बच्चा अक्षरों को ही नहीं पहचानता तो मात्रा वाले शब्दों से कैसे जूझेगा।

ज़ाहिर है, पढ़ने को लेकर व्याप्त पारम्परिक मान्यता और उस पर आधारित शिक्षक–विधि रिमझिम का आधार नहीं है। रिमझिम की सोच यह है कि पढ़ना सिखाने का उद्देश्य बच्चों को एक जिज्ञासु और नियमित पाठक बनाता है। वर्ण–परिचय से शुरू होने वाली शिक्षण–पध्दति ज़्यादातर बच्चों को साक्षर तो बना देती है, पर उत्साही पाठक नहीं बना पाती। ऐसा क्यों? शायद इसलिए क्योंकि पारम्परिक पद्धति में अक्षर–गान किसी सार्थक या रुचिकर संदर्भ में नहीं दिया जाता। हर अक्षर की आकृति और ध्वनि को बच्चे की स्मृति में बिठाने के लिए पारम्परिक ढ़ंग से पढ़ाने वाले शिक्षक को काफी समय और श्रम लगाना पड़ता है। वर्णमाला और बारहखडी को पूरा करते–करते महीनों बीत जाते हैं। इन महीनों में बच्चे जिस तरह की कवायद से गुज़र रहे होते हैं, वह उन्हें थका देती है। अंततः वे साक्षर तो हो जाते हैं, पर अपने स्कूली जीवन की किसी सार्थक आनन्द से जोड़ सकने का सामर्थ्य खो बैठते हैं।

हम इस हश्र से बच्चों को बचा सकते हैं, बशर्ते कि हम उन्हें पढ़ना सिखाने की शुरुआत सार्थक शब्दों और रुचिकर संदर्भों से करें। वैज्ञानिक शोध से पता लगा है कि पढ़ना सीखने की प्रक्रिया की स्वाभाविक शुरुआत बच्चे स्मृति–चित्र बनाकर करते हैं। यदि आप एक बच्चे को चूहे का चित्र और चित्र के नीचे लिखा शब्द चूहा दिखाएँ तो दो–चार बार ऐसा करने के बाद बच्चा एक कोरे कागज़ पर अलग से, यानि किसी चित्र के बिना, लिखा गया चूहा शब्द पहचान लेगा भले ही वह च और ह हम इनमें लगी मात्राएँ न पहचानता हो। यह कोई चमत्कार नहीं स्वाभाविक क्षमता है जिसकी बुनियाद पर पढ़ना सिखाने की शिक्षण–पद्धति का विकास हुआ है। इस पद्धति में ज़ोर बच्चे की रूचि के संदर्भ वाक्यों या शब्दों पर होता है। एक बार जब बच्चे साथ में दिये गए चित्रों या शिक्षक के साथ बातचीत के सहारे कई शब्द पहचानने लगते हैं, तब उन शब्दों में आए, अक्षरों की ओर उनका ध्यान दिलाया जाए इन शब्दों में मात्राओं की उपस्थिति कोई बाधा नहीं मानी जाती। मात्राएँ भी बच्चे की जिज्ञासु नज़र स्वयं पहचानने लगती है। इस पद्धति में शिक्षक की स्नेही भूमिका बहुत महत्व रखती है।

शिक्षक पढ़ना सिखाने के लिए तरह–तरह के तरीके इस्तेमाल करते है जैसे– *फ्लैश कार्ड, चार्ट, लकडी के अक्षरों जैसी प्रचलित सामग्री का उपयोग बेहतर तो यही है कि पढने की शुरुआत पुस्तकों से की जाए।* बच्चों में पढ़ना सीखने की तीव्र एवं स्थायी ललक पुस्तकें ही उत्पन्न कर सकती हैं।

पढ़ना एक एकाकी प्रक्रिया नहीं है, उसमें कई प्रक्रियाएँ शामिल हैं। पढते वक्त भाषा के उपयोग से जुड़े तीन तरह के संकेत सामने आते हैं –

- अक्षरों की आकृतियाँ और उनसे जुडी ध्वनियाँ
- वाक्य विन्यास
- शब्दों के अर्थ

पढ़ने की कुंजी **अनुमान** लगाने का कौशल है। इस कौशल के विन्यास में कहानी और कविताएँ आश्चर्यजनक योगदान करती हैं। नियमित रूप में इन्हें सुनने से बच्चे भाषा की बुनियादी संरचनाएँ ग्रहण कर लेते हैं।

रिमझिम में बच्चों के लिए रोचक कहानी और कविताएँ दी गई हैं। बच्चों को चारों ओर गोल घेरे में बैठाएँ और पुस्तक बीच में रखकर इन्हें सुनाएँ।

कहानियों को स्वर में उतार–चढ़ाव एवं हाव–भाव के साथ बच्चों को सुनाएँ ताकि वे कहानी में खो जाएँ। हमारे देश में कहानियों की गौरवशाली परम्परा रही है। पुस्तक में दी गई कहानियों के अतिरिक्त पारम्परिक कहानियाँ : जैसे– पंचतंत्र, जातक कथाएँ, विक्रमादित्य की कहानियाँ आदि और अलग–अलग देशों एवं क्षेत्रों की लोककथाएँ भी बच्चों को सुनाएँ। कहानी सुनते समय बच्चे अनुमान लगाते हैं कि आगे क्या होगा। अनुमान का सही सिद्ध होना बच्चे को आनन्दित तो करता ही है साथ ही साथ उनका विश्वास भी बढ़ाता है। यही **विश्वास** पढ़ने की क्षमता के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। कहानी सुनते समय नन्हें बच्चे, जो अभी साक्षर नहीं बने हैं, अपनी वास्तविक दुनिया से कहीं बड़ी काल्पनिक दुनिया बनाते हैं। इसलिए बच्चों को प्रतिदिन कहानियाँ सुनाएँ। पहले से सुनी कविता–कहानी बच्चे अनुमान लगाते–लगाते पढ़ना सीख जाते हैं। वे जल्दी पढ़ भी लेते हैं। अक्षर, शब्द एवं वाक्य की पहचान सहज हो जाती है। वास्तव में पढ़ना सीखने का सबसे अच्छा तरीका यही है कि बच्चे वही पढें जो **उनके लिए सार्थक हो।** कहानी बच्चे के लिए एक सार्थक दुनिया रचती है।

भाषा सीखने के साधन के रूप में कविता विशेष रूप से उपयोगी होती है क्योंकि कविता को याद रखना आसान होता है। इसे याद रखने के लिए बच्चों को विशेष प्रयास नहीं करना पड़ता। बार–बार सुनने, मज़ा लेने और दोहराने से कविता अपने आप याद हो जाती है। कविताओं को गाकर सुनाएँ और बच्चे साथ में गाएँ बाद में जब वे उसे पुस्तक में पढ़ेंगे तो शब्दों का सरलता से अनुमान लगा लेंगे। पुस्तक में दी गई रचनाओं के अतिरिक्त अन्य रचनाएँ भी बच्चों को सुनाएँ। शिक्षक के लिए ज़रूरी है कि अच्छी कहानी, कविताओं का चयन करें। ऐसी रचनाएँ जिनकी भाषा के विकास की दृष्टि से उपयोगिता हो। जिनकी वाक्य रचना और शब्दावली कृत्रिम न हो। जिनमें रोज़मर्रा की भाषा का पुट हो।

पढ़ना सिखाने के लिए सबसे अच्छी सामग्री शिक्षक ही बना सकते हैं। रोचक कहानियों, कविताओं, गीतों एवं खेलगीतों का संग्रह बना सकते हैं। पढ़ने में बच्चे की रुचि शिक्षक ही जगा सकता है। इसमें शिक्षक का स्नेहिल व्यवहार एवं पठन कौशल विकसित करने के लिए चुनी गई सामग्री एवं सामग्री के उपयोग की अहम भूमिका है। बच्चे का पढ़ना सीख लेने के बाद अपने इस नए कौशल को विविध उद्देश्यों के लिए इस्तेमाल

करने की प्रेरणा भी शिक्षक को देनी होगी तभी पढ़ना बच्चे के व्यक्तित्व के समग्र विकास का हिस्सा बन सकता है।

इस प्रकार रोचक कहानियों, कविताओं और तसवीरों पर बच्चों से बातचीत करके उनमें पढ़ने की इच्छा जगाकर उन्हें पढ़ना सिखाया जा सकता है। जब बच्चा अपनी ज़िन्दगी और आसपास हो रही चीज़ों के बारे में आत्मविश्वास से बातें करने लगे तो समझिए कि वह लिखना सीखने के लिए तैयार है। बच्चे को सुनाई गई कहानी–कविताओं तथा उस दौरान दिखाए चित्रों के इस्तेमाल के दौरान की गई गतिविधियों से उपजी बातचीत से प्रत्येक बच्चे के लिए एक शब्द या वाक्य चुनें तथा उसे बच्चे की कॉपी पर साफ–साफ लिख दें। फिर उसे पढ़कर सुनाएँ। इसके बाद बच्चे से कहें कि वह आपकी लिखावट को उतारे या उसी पर लिखे। रोज़ जब आप बच्चे को एक नया शब्द या वाक्य लिख कर दें तो पिछली सामग्री अवश्य दोहराएँ। बच्चे से कहें कि पिछले शब्दों या वाक्यों को पढ़कर सुनाए और जब उसे दिक्कत हो तो आप पढ़कर सुनाइए। साथ ही जब रोज़ नया वाक्य लिखने और पुराने वाक्य सुनने के लिए बच्चे के पास बैठें तो वाक्यों को थोड़ा विस्तार देकर उन पर बातचीत करना ना भूलें। आप जब बच्चे को लिखाई रोज़ देखेंगे तो पाएँगे कि अलग–अलग अक्षरों में उसे एक बराबर कठिनाई नहीं होती। कुछ अक्षर ज़्यादा अभ्यास माँगते हैं और उनका अभ्यास जितनी बार चाहें कराया जा सकता है। लक्ष्य यह है कि जो भी भाषा आप सिखा रहे हैं उसकी वर्णमाल के प्रत्येक अक्षर को लिखने और पहचानने में बच्चा प्रवीण हो जाए।

परन्तु पढ़ने–लिखने में प्रवीणता हासिल करने में बच्चों को समय लगेगा। आपको धीरज रखना होगा। कुछ बच्चे कक्षा 1 के अन्त तक तो कुछ कक्षा 2 में अच्छी तरह पढ़ना सीख लेंगे। यदि कोई बच्चा आपके बार–बार प्रयास करने के बावजूद आपकी उम्मीद के मुताबिक प्रदर्शन नहीं कर पा रहा है तो निराश न हों। न ही बच्चे को मंदबुद्धि समझने की गलती करें। प्रत्येक बच्चे की सीखने की अपनी ही गति होती है। आप सकारात्मक दृष्टिकोण रखकर और बच्चे की सराहना करके इस गति को बढ़ा सकते हैं।

एक और तरीके से आप वांछित परिणामों की उम्मीद कर सकते हैं। जब कभी अवसर मिले, बच्चों को छोटे–छोटे समूहों में बाँटकर कार्य करवाइए। जब छोटे समूहों में बच्चे बातचीत करते हैं, पढ़ने–लिखने का काम करते हैं, तब वे बिना किसी संकोच या डर के एक–दूसरे से अनगिनत बातें सीख लेते हैं। परन्तु यहाँ अपनी भूमिका को कम करके न आँकें। समूहों में काम करवाते समय आपकी जिम्मेदारी और बढ़ जाती है। आपको प्रत्येक समूह पर नज़र रखनी होती है कि वे सही दिशा में बढ़ रहे हैं या नहीं। साथ ही आपको यह भी ध्यान में रखना होता है कि आपकी भूमिका एक मित्र की रहे, केवल आदेश देने वाले शिक्षक/शिक्षिका की नहीं। आप बच्चे के मित्र बनकर ही उसका विश्वास जीत सकते हैं।

पठन सामग्री

दूसरा दिन

सत्र–2 : साहित्य और पढ़ना सीखना के इर्द–गिर्द कुछ बातें

सुशील शुक्ल

शिक्षा के अधिकार के मिल जाने से अब हमारी आँखों ने इस सपने के लिए तो जगह बनानी शुरू कर दी है कि अपने देश का हर बच्चा आने वाले चार–पाँच सालों में स्कूल में प्रवेश पा सकेगा। पर हम अपने ज़्यादातर स्कूलों को बच्चों के लिए एक सुखद जगह में नहीं ढाल पाए हैं। नित नया सीखने के उत्साह से भरे बच्चे एक दिन स्कूल में प्रवेश लेने के लिए घर से निकलते हैं। उस घर से जहाँ उन्हें प्रश्न पूछने की, अपने मन का कुछ करने की, मान–मनौव्वल की सीमित ही सही, पर आज़ादी हासिल होती है। सामाजिक–आर्थिक रूप से कमज़ोर घरों में बच्चों की ज़िन्दगी इतनी सुखद भले ही नहीं होगी पर वे घर पर एक अत्यन्त सक्रिय सदस्य की भूमिका निभा रहे होते हैं। जहाँ मध्यम वर्गीय बच्चे घर के कामों का खेल खेलते हैं, वहाँ ये बच्चे सचमुच घर के कामों में हाथ बँटा रहे होते हैं। पर इन दोनों ही तरह के बच्चों को स्कूल पहुँचकर निराशा हाथ लगती है उनके तमाम अनुभव स्कूल में किसी काम नहीं आते। स्कूल इन तमाम अनुभवों को नज़रअन्दाज़ कर, पोंछकर पढ़ाई शुरू करता नज़र आता है। अपने जीवन में भाषा से अच्छा खासा काम चला रहे बच्चे को अ–से पढ़ना शुरू करना होता है। एक तरह से स्कूल उसके जीवन के चार–पाँच सालों को ही नज़रअन्दाज़ कर देता है। और फिर स्कूल में बच्चों का पुनर्जन्म होता है। एक–एक बच्चे का दुहरा जीवन शुरू होता है–स्कूल का जीवन और स्कूल से बाहर का जीवन। इन दोनों जीवनों में कोई संवाद नहीं होता।

बच्चे की भाषा बनाम स्कूल भाषा

फिर शुरू होता है स्कूली जीवन के सबसे दुखदाई और कठिन काम की शुरुआत। पढ़ना सीखने की शुरुआत। स्कूल में रोज़–रोज़ एक जीवन शुरू होता है जिसमें बच्चे को हर पल इस बात का अहसास दिलाया जाता है कि उसे क्या–क्या नहीं आता। बच्चे शायद कहना चाहते है कि उन्हें हाथी पढ़ना नहीं आता पर वे हाथी के बारे में सुनी एक पूरी कहानी सुना सकते हैं। पर स्कूल के बोर्ड पर लिखा हाथी कहानी के हाथी को पहचानने से इन्कार कर देता है। धीरे–धीरे जीवन के तमाम अनुभव, समझ, तर्क सब स्कूल में आते ही सूख जाते हैं। स्कूली पढ़ाई अब बच्चों के अनुभवों को झंकृत नहीं करती बल्कि वह एक जानकारी की तरह याद रह जाने लगती है। और पढ़ने का काम व्यर्थ लगने लगता है।

पढ़ना सिखाने का काम आसान भले ही न हो पर उसे रोमांचक, रुचिकर बनाया जा सकता है। सबसे पहली शर्त तो बच्चे के पूर्व ज्ञान, उसके अनुभव, उसकी भाषा को मान्यता देने की है। यह मान्यता ही वह एकमात्र बिन्दु हो सकती है जहाँ से चलकर पढ़ना सीखने की तरफ कोई रास्ता जाता है। पढ़ना सिखाने की शुरुआत किस्से–कहानियाँ सुनने–सुनाने से हो तो बेहतर। क्योंकि तब बच्चे अपने तमाम अनुभव के साथ आपकी बात सुनने तथा अपनी सुनाने के लिए प्रस्तुत हो सकेंगे। यह दुतरफा मामला बच्चों में शुरुआती विश्वास पैदा करेगा । इस विश्वास पर पाँव रखकर ही बच्चे उन अनजानी, अमूर्त आकृतियाँ से जूझने चले आएँगे जो पढ़ना सीखने के रास्ते में आएँगी। यही विश्वास उन्हें अन्दाज़, अनुमान लगाने की हिम्मत देगा जो पढ़ना सीखने में आगे एक प्रमुख औज़ार साबित हो सकता है।

किस्से–कहानियाँ किताबों से सुनाने की पहल हो सकती है। इसके लिए साहित्य के चुनाव में थोड़ी बहुत सावधानी रखने की ज़रूरत होगी। एक शिक्षक जो बच्चों से किस्से कहानियाँ सुन चुका होगा, उन्हें किस्से कहानियाँ सुना चुका होगा, उसे इस बात का अन्दाज़ा लगाने में ज़्यादा मुश्किल नहीं जाएगी कि किस किस्म का साहित्य बच्चों को आकर्षित करेगा। फिर भी शुरुआती तौर पर साहित्य ऐसा हो जिसमें बच्चों के द्वन्द्व, अनुभव, कल्पना आदि शामिल हों। बाल पात्रों से बच्चे खुद को ज़्यादा जोड़ पाते होंगे इसलिए शुरुआत में इस बात का ख्याल रखना शायद कारगर साबित हो। पर किस्से कहानियों के बच्चे सक्रिय होने चाहिए – कहानी में पेश घटना में सक्रिय रूप से शामिल।

पढ़ना सीखना और शुरुआती साहित्य

हम सालों साल बच्चों को वर्णमाला से पढ़ना सिखाते रहे। अक्षर ज्ञान और उसे जोड़कर शब्द को उसकी ध्वनि के साथ पहचानने भर से हमारी पढ़ने की परिभाषा बन जाती रही। अर्थ तक पहुँचने और पढ़ने का आनन्द पाने की कड़ी, पढ़ना सीखने की प्रक्रिया से गुम रही। हमें कभी इस शुरुआती दौर के लिए साहित्य की ज़रूरत पेश ही नहीं आई। इसलिए हमारे पास आज बेहतरीन 100–200 किताबें उन बच्चों के लिए नहीं है जो पढ़ना सीखना शुरू कर रहे हैं। एक ऐसी छोटी किताब जिसे पढ़कर न सिर्फ बच्चे के अनुभव झनझना जाएँ बल्कि वह आत्मविश्वास से भी भर जाए कि उसने एक किताब पूरी पढ़ डाली है।

आमतौर पर पढ़ना सीख रहे बच्चों को ध्यान में रखकर कृत्रिम किस्म की चित्रकथाएँ तैयार की जाती हैं। जिनमें कोई मोड़ नहीं आता, कोई तनाव पैदा नहीं होता कोई कशमकश पाठक को हासिल नहीं होती। न किसी तर्क की ज़रूरत पड़ती है, न कोई कल्पना की उड़ान का आनन्द व रोमांच हासिल होता है। असल में ऐसे साहित्य से भाषा का अपना काम भी पूरा नहीं होता। भाषा सिर्फ किसी बात को संप्रेषित ही नहीं करती बल्कि वह कल्पना में, किसी चीज़ को महसूस करने में, किसी चीज़ से जुडने में, सोचने में, तर्क

करने में काम आती है। यही भाषा की बड़ी भूमिकाएँ समझी भी जाती हैं। साहित्य में भाषा अकसर अपनी इन सब भूमिकाओं के साथ सामने आती है। यानी पढ़ना सिखाने में साहित्य की बेहद उपयोगी भूमिका हो सकती है। यह महत्वपूर्ण है कि एक कहानी जो बच्चों को सुनाई जा रही है उसमें बच्चों को तर्क करने, कल्पना करने, किसी चीज़ से जुड़ने के कितने अवसर मिल रहे हैं।

अच्छे साहित्य में पाठक के लिए जगह–जगह प्रवेश करने, उसमें शामिल होने की रिक्त जगहें होती हैं। कहानी सुनाते हुए शिक्षक तथा कहानी सुनते हुए बच्चे इन जगहों में प्रवेश करके साहित्य का आनन्द लेते हैं। साहित्य की यही गुँजाइशें एक ही कहानी को बार–बार थोड़े–से फेर–बदल के साथ सुनने का रोमांच बनाए रखती हैं। पढ़ना सीख रहे बच्चों के लिए यह न सिर्फ एक रियाज़ होता है बल्कि वे पिछली बार सुनी हुई बात का एक तरह से परीक्षण भी बार–बार सुनकर करते हैं। पढ़ने के दौरान पिछली बार सुनी कहानी में आगे क्या होगा इस बात का अन्दाज़ा लगाकर उसे डीकोड कर लेने का आनन्द भी पाते हैं। ऐसी छोटी–छोटी बातें उनके पढ़ना सीखने के सफर को कुछ रोचक बनाए रखती है। एक कहानी जो एक चालाक लोमड़ी थी से शुरू होती है वह इन सब अवसरों को, सम्भावनाओं को कुचल डालती है। आम तौर पर इस तरह के वाक्यों से भरी कहानियों में पाठक को डीकोड करने के लिए ज़्यादा कुछ नहीं होता है।

साहित्य पाठकों को कुछ समय के लिए मुक्त भी करता है। पढ़ते समय एक पाठक अपनी दुनिया, पहचान को थोड़ी देर के लिए लगभग स्थगित कर कहानी या कविता की दुनिया में प्रवेश करता है। वह किरदारों से जुड़ जाता है। कभी वह उनके ऐवज में या कभी वह उनके साथ कहानी में आई चुनौतियों का सामना करने लग जाता है। ऐसी स्थिति का सामना करने के लिए अनायास ही तैयार हो जाता है जो कहानी में चल रही होती है। एक तरह से यह समय बच्चों को – जो अकसर आज़ादी के लिए तड़पते रहते हैं – बहुत रास आता है। कहानी की दुनिया में उन पर कोई बन्दिश नहीं होती। वे जैसा चाहें अर्थ लगाएँ जो चाहें फैसला करें। जिसे चाहें ठीक समझें। जिस किरदार के साथ चाहे खड़े हो जाएँ। अच्छी कहानी या कविता बार–बार नियमों–कायदों को तोड़कर उनके पार चली जाती है।

बच्चों को शायद साहित्य के उक्त गुण आकर्षित करते हैं। पढ़ना सीख रहे बच्चों को साहित्य की यह तासीर खींचती है। वे इन अनुभवों से गुज़रने के लिए पढ़ने की तरफ आकर्षित होते हैं। साहित्य का काम यहीं खत्म नहीं हो जाता। वह कहानी के पढ़ लेने के बाद भी पाठक के भीतर जारी रहता है। और अनजाने ही भाषा की मरम्मत चलती रहती है।

साहित्य में उनकी मौजूदगी

बच्चों के लिए बहुतायत में कविताएँ लिखी जाती हैं। पर उनमें साहित्य के ये गुण गुम रहते हैं। रटे–रटाए विषयों पर महज़ तुकबन्दी साध कर लिखी गई कविताओं से बच्चे खुद को जोड़ नहीं पाते हैं। कविता का एक गुण उसकी अनप्रेडिक्टिबिलिटी होती है। ऐसी कविताएँ पढ़ना सीख रहे बच्चों को शायद उतनी मदद न कर पाएँ। पर कविताएँ अगर किसी घटना पर आधारित होंगी तो बच्चों को कविता में चल रही कहानी दोगुना मज़ा दे सकती है। पढ़ना सीखने में अनुमान का महत्व बेहद है। इस तरह की कविताओं में पाठकों को दो तरह से अनुमान लगाने में सहायता मिलती है। एक तो कविता का ढाँचा उन्हें मदद करता है, दूसरा कविता में चल रहा घटनाक्रम अनुमान लगाने में मदद करेगा। इस तरह ये कविता के फॉर्म की खूबसूरती का भी आनन्द उठा पाएँगे और उसमें चल रही घटना का अनुभव भी ले पाएँगे।

बच्चों के लिए खास तौर पर हिन्दी में जो साहित्य लिखा जा रहा है उसमें से ज़्यादातर बेहद सपाट है। उसमें बच्चों की अपनी दुनिया, जिसमें वे रह रहे हैं, की कोई झलक नहीं मिलती। साहित्य में बच्चों के सामने एक बनावटी दुनिया सामने आती रहती है। बच्चों के द्वन्द्व, संघर्ष, कल्पनाओं की इसमें कोई जगह नहीं है। क्या बच्चे ऐसे साहित्य से खुद को जोड़ पाते होंगे? अधिकतर बाल साहित्य में मध्यमवर्गीय पारम्परिक हिन्दू जीवन–शैली का गान दिखता है। क्या यह बात सामाजिक–आर्थिक रूप से कमज़ोर पृष्ठभूमि के बच्चों के पढ़ना सीखने के संघर्ष में कुछ और इज़ाफा नहीं कर देती होगी? उनकी जीवन–शैली व मूल्यों के प्रति यह साहित्य कितना संवदेनशील बना रहता होगा? पढ़ना सीखना तब कुछ आसान हो सकता है जब पढ़े या सुने जा रहे साहित्य में पाठक शामिल हो पाए। पढ़ी हुई सामग्री बच्चे के अनुभव से जुड़कर मन को तरंगित करे। अर्थ निर्माण तक पहुँचकर ही तो पढ़ना सीखने का सफर पूरा होता है। यानी पढ़ना सीख रहे पाठकों के लिए शुरुआती दौर में ऐसा साहित्य मदद करता है जो उनके परिवेश से सीधे जुड़ा हो।

मसलन, रामनरेश त्रिपाटी की यह कविता शुरुआती पाठकों के लिए एक बेहतर कविता हो सकती है :

बहुत जुकाम हुआ नंदू को
एक रोज़ वह इतना छींका
इतना छींका इतना छींका
इतना छींका इतना छींका
सब पत्ते गिर गए पेड़ के
धोखा हुआ उन्हें आँधी का।

यह कविता हमारे जीवन के एक बहुत आम अनुभव जुकाम के बारे में है। ऐसी कविताएँ हमें बच्चों को अपने जीवन में प्रवेश कराने के कई मौके उपलब्ध कराती हैं। शायद ही कोई बच्चा होगा जिसके पास जुकाम का कोई न कोई किस्सा नहीं होगा। यह कविता झट से उस अनुभव को जगा देगी। भाषा अपने तमाम पहलुओं के साथ काम में लग जाएगी। बच्चे इस कविता को पढ़ते हुए, एक पैर अपने अनुभवों पर रखे हुए अपना दूसरा पैर कल्पना पर रखने के लिए बढ़ा देंगे। इतना छींका, इतना छींका, इतना छींका...यह ठेठ बच्चों का किसी बात को बताने का तरीका होता है। ये अकसर इस प्रयोग का इस्तेमाल करते हैं। पेड़ के सब पत्ते गिरने का अनुभव उन्हें हैं। आँधी का भी है। पर छींक से आँधी आने की कल्पना बेहद आनन्ददाई होगी। ऐसी कविताओं पर बच्चे बार–बारं आते हैं।

बच्चों के अनुभव और कल्पनाएँ

इस एक छोटी–सी कविता ने उनके परिवेश की कितनी चीज़ों को एक साथ लाकर खड़ा कर दिया। इस कविता में बच्चों को शामिल होने की कितनी जगहें साफ नज़र आती है। जब पेड़ को पता चला होगा कि यह नंदू की छींक थी आँधी नहीं, तब उसे कैसा लगा होगा? कविता की आखिरी पंक्तियों में पेड़ को धोखा हो जाने की बात है। स्कूली किताबें–कॉपियाँ एक जैसी होती हैं। कई बार बच्चे अपनी किताब या कॉपी के धोखे में अपने दोस्त की किताब या कॉपी उठा लाते हैं। इस एक सामान्य घटना पर अब्बास किरस्तानी ने एक बेहद खूबसूरत फिल्म बनाई है। ऐसे कई अनुभवों को यह कविता कक्षा में लाने का एक मौका उपलब्ध कराती है। कविता में अर्थों की झिलमिल भी बनी रहती है। जब एक बच्चा पेड़ को हुए इस धोखे से हँस रहा होगा, तब हो सकता है उसके ठीक बगल में बैठा बच्चा पेड़ के सब पत्ते गिर जाने से उदास हो जाए। पेड़ के सब पत्ते गिर गए होंगे तो क्या पेड़ सूख गया होगा?वह कौन–सा पेड़ होगा?क्या उस पर किसी चिड़िया का घोंसला होगा?हो सकता है कोई बच्चा नंदू की मुश्किल के बारे में सोच रहा हो और कोई यह सोच रहा हो कि अगर नंदू के छींकने से पेड़ के पत्ते गिर गए तो आसपास और क्या–क्या हुआ होगा? क्या सचमुच किसी की छींक से पेड़ के सारे पत्ते झड सकते हैं।

साहित्य के रचे इस झूठ ने कल्पना को कितनी उड़ाने दे दीं। बच्चे जब झूठ बोलते हैं तो हम परेशान हो जाते हैं। पर एक तरह से देखें तो वे एक ऐसे आनन्दाई रियाज़ में लगे हैं जहाँ उन्हें उस घटना को गढ़ने का मौका मिल रहा है जो असल में घट नहीं रही है। इस तरह के झूठ भविष्य के किसी सत्य के खड़े होने के लिए ज़मीन तैयार करते हैं। इसलिए साहित्य के बारे में अकसर कहा जाता है कि वह एक सच प्रकट करने के लिए झूठ पर झूठ गढ़ता चला जाता है। कुल मिलाकर कहना यह है कि पढ़ना सिखा रहे शिक्षक को यह कविता पर्याप्त मौके देती है।

एक और कविता का उदाहरण लेते हैं जो बच्चों की बेहद पसन्दीदी कविता बन चुकी है।

चार चने (निरंकारदेव सेवक)

पैसे पास होते तो चार चने लाते
चार में से एक चना तोते को खिलाते
तोते को खिलाते तो टाँव–टाँव गाता
टाँव–टाँव गाता तो बड़ा मज़ा आता।

पैसे पास होते तो चार चने लाते
चार में से एक चना घोड़े को खिलाते
घोड़े को खिलाते तो पीठ पर बिठाता
पीठ पर बिठाता तो बड़ा मज़ा आता।

पैसे पास होते तो चार चने लाते।
चार में से एक चना चूहे को खिलाते
चूहे को खिलाते तो दांत टूट जाता
दांत टूट जाता तो बड़ा मज़ा आता।

यह कविता इन्सान की उस शाश्वत इच्छा का विनम्र स्वीकार है कि काश ऐसा होता तो हम फलाँ चीज़ कर लेते। हमारे मनों में रोज़ ही ऐसी लहरें अपने किनारों से टकराकर फिर–फिर लौटती हैं। हम जीवन जीने की शुरुआत को स्थगित किए रहते हैं कि वह जो अब तक न हुआ है पहले वो हो जाए। हमारी दुनिया में एक बेहद बड़ी संख्या उन लोगों की है जिनका तो जैसे जीवन ही इस बढत के साथ शुरू होता है कि पैसे पास होते तो... उनका जीवन ही जैसे रागों के लगने से रह जाने में ही पूरा बीत जाता है।

बचपन भी बेहद बन्दिशों में लिपटा दौर होता है। वहाँ भी इच्छाओं की बढत का अनन्त है और वहाँ भी बार–बार राग पाते–पाते रह जाने की मन की सिमटन है। इसीलिए शायद यह बच्चों की बेहद पसन्दीदा कविता बन चुकी है। ऊपरी तौर पर देखें तो उसकी बुनावट में अनुप्रास का चमत्कार भी है – पैसे पास का और चार चने का।

दोहरावों में भाषा के खेल

हमारा सारा सीखना ही दोहरावों से भरा पड़ा है। बचपन में एक शब्द तक पहुँचने के लिए उस शब्द के आसपास आ–आकर ठहर जाते हैं। उसके आस–पड़ोस के शब्दों तक जाते हैं। एक तरह से उस शब्द तक

पहुँचने के रास्ते पर बार–बार आना–जाना होता है। और बार–बार आकर और वापिस चले जाकर हम उस शब्द को सीखते हैं। इस कविता के अर्थों में ही नहीं उसकी बुनावट में भी ग़ज़ब का दोहराव है। हम बुनावट को समझने लगते हैं और कविता जहाँ खत्म हो जाती है उससे एक कदम बढ़ाकर कहते हैं कि पैसे पास होते तो चार चने लाते... चार में से एक चना किसी को खिलाते...किसी को खिलाते तो वह कुछ करता...वह कुछ करता तो बड़ा मज़ा आता।

यह दोहराव हमें अपनी लोक–कथाओं की याद भी दिलाता है जिसमें कथा आठ–दस चरणों में चलती है। हर चरण से पहले कथा पूर्व के हर चरण को फिर से दुहराती है। पढ़ना सीख रहे बच्चों के लिए ये लोक–कथाएँ एवं दोहराव की तासीर वाली कविताएँ बहुत भाती होंगी। इसलिए भी कि इनमें भाषा का एक खेल चलता रहता है। जैसे वे झूला झूलते हैं। हर बार झूला नई ऊँचाई पर जाता है। पर हर बार वापिस उसी पुराने रास्ते पर भी आता है। बार–बार आगे बढ़ना और बार–बार वहाँ चले जाना जहाँ से चलना शुरू किया था। लोक कथाओं के इस दोहराव वाले तत्व में एक और तरह की गुँजाइश भी छुपी हुई है। ये कथाएँ उन्हें सुनने आ रहे पाठक का अपनी पंक्ति तक इन्तज़ार करती हैं। और जब कहानी अपने चरम या अन्तिम दौर में पहुँच जाती है तब भी वह एक बार फिर अपनी उस सबसे पहली पंक्ति तक आती है जहाँ से वह कभी शुरू हुई थी। जैसे हर चरण में वह थोड़ी आगे बढ़ती है और फिर अपने अभी–अभी जुड़े नए पाठक के लिए दुबारा शुरू से कथा सुनाने चली जाती है। बुढ़िया की रोटी कहानी को ले लीजिए। वह पेड़ के पास जाती है कि कौआ उसकी रोटी ले जाता है। पर लकड़हारे को वह यह बताना नहीं भूलती कि वह पहले पेड़ के पास गई थी। और पेड़ ने उसे मदद करने से मना कर दिया है।

जीवन में चार चनों का क्या मोल?तो यह कविता एक किस्म की बेमतलबी का जादू रचती है। इसी फिजूलियत जिसे नॉनसेंस कहते हैं की वज़ह से इस कविता में अतिरिक्त मिठास आ गई है। सिर्फ चार चने में से एक चना खिलाने की बात नहीं है, बल्कि कविता की पूरी बुनावट ही नॉनसेंसिकल है। एक चने का तोते को खिलाना और उसका टाँव–टाँव गाना। और टाँव–टाँव गाने से मज़े का आना। या चूहे के चने चबाने से उसके दाँतों का टूटना और उसमें मज़ा आना। अगर इस कविता का स्वभाव नॉनसेंसिकल न होता तो चूहे के दाँत टूटने पर मज़े आने की बात खटकती। पर कविता की अन्तर्वस्तु हमें चुपचाप यह बात बता देती है कि इसमें मतलब निकालने की ज़रूरत नहीं है। ठीक वैसे ही जैसे– लकड़ी की काठी वाले गीत में घोड़े की दुम पे जो मारा हथौड़ा में है। ऐसी कविताएँ पढ़ना सीख रहे बच्चों के लिए कमाल का काम करती दिखती हैं। इनमें बच्चों के शामिल होते चले जाने की असंख्य जगहे हैं। कभी आपने इस बात पर गौर किया है कि हम सभी को ये फिजूलियत भरी रचनाएँ क्यों पसन्द आती हैं? शायद इसलिए कि जहाँ अच्छे साहित्य में पाठक को शामिल होने के लिए जगह–जगह खाली स्थान रहते हैं, वहीं एक नॉनसेंस रचना पूरी की पूरी पाठक के लिए ऐसी रिक्तियों से भरी पड़ी रहती है। रिक्तियों से बुनी, अर्थों से खाली कविता।

पैसे पास होते तो... एक जुदा कहानी

आपको याद है एक महान कहानी–ईदगाह–में हामिद के पास कितने पैसे होते हैं? पर वह कहानी इस कविता के ठीक उलट खड़ी रहती है। वह यथार्थ का चित्रण करती है। उसमें भी इस कविता का स्वभाव है। साहित्य व कलाओं खासतौर पर संगीत, चित्रकला आदि में वह स्पष्ट दिखता है। किसी बात को कहने के लिए उसका इर्द–गिर्द रचते जाना। और हर बार उसका इर्द–गिर्द रचते हुए उसके करीब पहुँचते जाना। रचना के तत्व के इर्द–गिर्द तक बार–बार पहुँचते–पहुँचते एक ऐसा चरम आता है जब कोई इर्द–गिर्द बाकी नहीं बचता। हम रचना तक पहुँच जाते हैं। रचना में असल मज़ा तत्व तक पहुँचने के लिए रचे गए इर्द–गिर्द के संघर्ष में है। हामिद क्या खरीदता है वह इतना आनन्द पैदा नहीं करता, जितना यह कि वह क्या–क्या खरीद सकता था पर नहीं खरीदता। यह इर्द–गिर्द ही तो आखिर में हामिद के चिमटा खरीदने को मीठा बनाता है। यह एक सार्थक रचना है। तर्क पेश करती है। हामिद का यह व्यवहार हमें कृत्रिम लग सकता था अगर यह रचना उद्घाटित नहीं करती कि अमीना के अलावा हामिद का इस दुनिया में कोई नहीं है। यानी हामिद को बचपन नसीब नहीं हुआ। वह जीवन के संघर्ष में अपनी उमर से पहले ही बड़ा हो गया है। और वह बताता है कि ऐसे बच्चे और उनके परिवार आग से खेलते हुए रोटी हासिल करते हैं। हामिद उसी रोटी को पकड़ने के लिए ही तो चिमटा खरीदता है। चिमटा देखकर अमीना की आँखें क्यों भरती हैं? क्या यह सोचकर कि कैसे हामिद उमर से पहले ही वयस्क हो गया? साहित्य अपनी इन तमाम सम्भावनाओं के साथ पाठक के समक्ष प्रस्तुत होता है। भाषा अपने तमाम छरहरे रूप में साहित्य में सामने आती है। यह हमारी नाकामयाबी रही है कि हम साहित्य के इन गुणों को बच्चों के लिए लिखी ज़्यादातर रचनाओं में शामिल नहीं रख पाए। साहित्य एक ऐसी जगह की तरह बच्चों के सामने पेश आए जिसमें उन्हें लुका–छिपी का खेल खेलने के लिए छुपने की पर्याप्त जगहें उपलब्ध हों।

हलीम चला चाँद पर....

"हलीम ने एक दिन सोचा, आज मैं चाँद पर जाऊँगा। वह रॉकेट के कारखाने में गया और एक रॉकेट पर बैठकर चल दिया। चलते–चलते अँधेरा हो गया। हलीम को डर लगने लगा। उसको तो चाँद तक का रास्ता पता नहीं था। थोड़ी देर में उसे चाँद दिखा। और वह खुश हो गया। चाँद पर हलीम को खूब सारे गड्ढे दिखे और बड़े–बड़े पहाड़ भी। लेकिन वहाँ कोई पेड़ या जाँनवर नहीं थे। लोग भी नहीं थे। हलीम ने सोचा, यह भी कोई जगह है। चलो वापिस घर चलें। वह रॉकेट में बैठकर घर लौट आया।"

चाँद बच्चों का बेहद पसन्दीदा है। चाँद एक दूरी है। वे सारी चीज़ें जो दिखती तो अकसर हैं पर उन्हें हासिल नहीं किया जा सकता। चाँद ऐसी सारी इच्छाओं का प्रतिनिधित्व करता है। दिन में बच्चे बाहर

खेल–कूद सकते हैं। पर रात में तो उन्हें घर ही रहना पड़ता है। बाहर न जा पाने की मजबूरी में चाँद दिखता है। रात में बाहर निकला हुआ।

यह कहानी चाँद पर चले जाने की है। हलीम ने एक दिन सोचा, चाँद पर जाऊँगा। यह पंक्ति दुनिया के हर बच्चे की मन की बात होते हुए भी एक बेहद निजी बात बनी रहती है। क्योंकि हर बच्चे के मन में चाँद की एक अलग तस्वीर होती है। चाँद के अलग अनुभव होते हैं। और चाँद से मिलने के रास्ते भी अलग। ज़्यादातर साहित्य में किसी–न–किसी रूप में चाँद ही बच्चों के पास आता है। पर यहाँ चाँद से मिलने के लिए खुद चले जाने की कथा है। बच्चों के इतने सक्रिय किरदार कम देखने में आते हैं। इस किताब के चित्र बेहद रोचक हैं। और उनसे मिलकर कहानी पूरी होती है। किताब के पहले ही पन्ने पर हलीम झाडू से कचरा बुहार रहा है। और चाँद–सितारों के बारे में सोच रहा है। झाडू लगाने के विवरण तो हमारे हिन्दी समाज की बड़ी–बड़ी किताबों से गुम हैं। जैसे यह कोई काम ही न हो। झाडू लगाना बच्चों का पसन्दीदा पहला–पहला काम होता है जिसमें उन्हें इस बात पर इतराने का मौका मिलता है कि वे बड़ों के कामों में से कुछ खुद निपटा सकते हैं। वे कामों को खेलने की जगह उन्हें सचमुच करना चाहते हैं। खैर, तो इस किताब में बच्चे समझ जाते हैं कि असल में हलीम उन्हीं की तरह चाँद पर चले जाने के सपने देख रहा है। चाँद का रास्ता भले ही उनका जाना–पहचाना नहीं है पर हलीम जिस रास्ते पर चल रहा है वह उनका जाना–पहचाना है। क्योंकि वे खुद अकसर इस रास्ते से चाँद पर आया–जाया करते हैं। अकसर बच्चों की या कई बार तो बड़ों की किताबों में भी यह स्पष्ट रूप से चित्र बनाकर दिखा देते हैं कि अब फलाँ किरदार सपने देख रहा है। और जो बात कही जा रही है वह उसके सपने में कही जा रही है। पर इस किताब में ऐसा नहीं है। यह किताब पाठकों पर ज़्यादा भरोसा करती है।

साहित्य में यह गुंजाइश बनी रहती है कि वह सुदूर सपने की बात को आज में विश्वसनीय रूप से घटित होता हुए दिखा देता है। यानी खेल, सपने और यथार्थ को यह किताब एक ही तल पर लाकर खड़ा कर देती है। हलीम झाडू पर बैठकर चाँद पर चला जाता है। रास्ता लम्बा है। क्योंकि वहाँ जब पहुँचे तब तक रात हो चुकी है। रात हुई तो चाँद निकला। तभी तो पता चला कि चाँद है कहाँ। वरना दिन में पहुँचते तो पता कैसे चलता? पर इस खेल में चाँद पर जाना है। इसलिए इस खेल का अन्त यह नहीं हो सकता कि हलीम वहीं रुक जाए। क्योंकि हलीम तो अपने घर पर झाडू लगा रहा है। उसे जल्दी ही अपने इस खेल को खत्म कर दूसरा खेल खेलना है। या कोई और सपना देखते हुए काम पर लग जाना है। यानी उसे वापिस धरती पर आना है। पर वह क्यों वापिस आए? क्योंकि चाँद पर तो गड्ढे–पहाड़ हैं... कोई जानवर नहीं, कोई पेड़ नहीं, लोग नहीं... भला यह भी कोई रहने की जगह हुई। यह किताब बताती है कि वह भले ही बच्चों के खेल–खेल की कहानी हो पर उसमें एक तर्क होना चाहिए। यह बात भी उसे याद रहती है कि रहने लायक दुनिया सिर्फ इन्सानों से ही नहीं बन जाती है। वह एक ऐसी दुनिया की तरफ लौटना चाहता है जहाँ इन्सानों के साथ–साथ पेड़ और जानवर भी होंगे। हलीम चला चाँद पर नाम की यह किताब

बच्चों के स्वभाव की किताब है। जैसे घर के बाहर एक आँगन होता है। घर के सबसे नज़दीक का बाहर। जहाँ बच्चों को बाहर चले जाने का रियाज़ करने का मौका मिलता है। यह किताब एक तरह से सिफारिश करती है कि स्कूल से लगा उसका एक आँगन होना चाहिए जहाँ बच्चे उससे बाहर निकलना सीख पाएँ। स्कूल के सबको एक तरह से सम्बोधित करने के माहौल के बीच साहित्य एक ऐसे कोने की तरह स्थापित हो सकता है जहाँ वह एक–एक बच्चे को पहचान कर उससे बात कर सके।

एक बात और...

बच्चों को पढ़ना सिखाने में कहानियाँ–कविताएँ सुनाना बेहद उपयोगी हो सकता है। पर यह ज़रूरी है कि साहित्य ऐसा हो जिसमें वे तमाम सम्भावनाएँ हासिल हों जिनके बारे में थोड़ी बातचीत हम ऊपर कर चुके हैं। ऐसा साहित्य पाठक को खुद की एक दुनिया की कल्पना करने को उकसाता है। रचना में शामिल पाठक अनजाने ही रचना में डूबता–उतराता रहता है। वह अपनी तमाम इच्छाओं के साथ रचना में दाखिल हो जाता है। वह वहाँ स्वतंत्र रूप से घूमना–फिरना चाहता है। उसे रचना में विचरते समय किसी का साथ मंज़ूर नहीं। एक साहित्य के अलावा खुद के इतने करीब चले आने की गुंजाइश और कहाँ हासिल होती है? एक तरह से पाठक इस यात्रा में नए सिरे से खुद को पहचानता है। वह खुलकर अपने सामने प्रस्तुत होता है। बच्चे अकसर इस दुनिया में प्रवेश चाहते हैं। जहाँ वे पहले बड़ों के साथ गए थे, वहाँ वे अकेले जाना चाहते हैं। वे रचना में अपनी पसन्द की जगह थोड़ा ठहरना चाहते हैं। वे किसी खास हिस्से को दुबारा सुनना चाहते हैं। वे जहाँ मन करे उस जगह, कहानी को अपनी तरह पढ़ना चाहते हैं। एक नए अर्थ में। जहाँ वही सच हो जो वे सच समझते हैं। पर ऐसा मौका तो तब मिलेगा जब वे उसे खुद पढ़ना सीख जाएँगे। यह ललक बच्चों को जल्दी पढ़ना सीखने के लिए प्रेरित करती होगी।

पठन सामग्री

दूसरा दिन
सत्र–3 : किताबें करती हैं बातें

अंजली नरोना

कहानियाँ बचपन का एक अभिन्न अंग हैं। चाहे वे खुद गढ़कर सुनाई गई हों या पुस्तकों से पढ़कर। ऐसे ही कविता और गीत भी बच्चों की भाषा का एक अहम हिस्सा हैं। और इसी तरह चित्रों की दुनिया है, जो बचपन को रंगों से भर देती है। सभी बच्चों की रुचियाँ अलग–अलग होती हैं–रुचियाँ उम्र के हिसाब से भी बदलती है। व्यक्तित्व और सन्दर्भ के हिसाब से भी। यदि हर बच्चों को अपनी पसन्द की कुछ पुस्तकें मिल जाएँ तो पढ़नें में उनकी रुचि पैदा हो जाएगी कि पढ़ना सीखने का मानो आधा काम ही हो गया। हमारे

सामने चुनौती यह है कि हमारे पास पुस्तकों की पर्याप्त विभिन्नता हो ताकि हर बच्चे को अपनी पसन्द की पुस्तके मिल सके। कक्षा 1 व 2 के बच्चों के लिए पुस्तकें चुनने में मदद करनें वाली कुछ बातें हम यहाँ आपके सामने रख रहे हैं।

कहानियों की विषय–वस्तु

इस उम्र के बच्चे जानवरों से बहुत लगाव रखते हैं और खासकर जानवरों के बच्चों से। वे अपने हम उम्र बच्चों की कहानियाँ भी खूब पसन्द करते हैं। जानवरों की कहानियों में कुछ ऐसी हैं जिनमें जानवरों के नाम हैं और वे बोलते भी हैं। और कुछ ऐसी जिनमें उनके बारे में कहानियाँ हैं, पर वे बोलते नहीं उनके नाम नहीं हैं। पहली तरह की कहानियों में *मैं भी, चूहे को मिली पेन्सिल, बोबक बकरा और बुढ़िया की रोटी* ऐसी कहानियाँ हैं जिनमें जानवर बोलते हैं, भले ही उनके नाम न हों।

बाघ का बच्चा तकदीर, महागिरी और मेढक और साँप जैसी कहानियों में जानवर बोलते नहीं हैं। कुछ लोगों का मानना था कि बोलते हुए जानवर बच्चों को भ्रमित करेंगे। परन्तु अब यह स्थापित हो चुका है कि इन चीज़ों से बच्चों को कोई खास फर्क नहीं पड़ता, बशर्ते कहानी रोचक हो।

कहानी की रोचकता मुख्यतः तीन चीज़ों से बनती है।

- एक चीज़ तो यह है कि कहानी में क्या समस्या या द्वन्द्व है? वह किस तरह से स्थापित किया गया है? इस द्वन्द्व या समस्या का निदान क्या है?
- दूसरी चीज़ है कहानी के मुख्य पात्र और बच्चों से उनके सम्बन्ध बन पाना।
- तीसरी चीज़ है कहानी का एक सूत्र में बँधे रहना और बच्चों के ध्यान की सीमा के अन्दर ही रहना।

***लालू और पीलू* में एक छोटी समस्या है** – लालू का गलती से लाल मिर्च खा लेना। यह समस्या चौथे पन्ने पर ही स्थापित हो जाती हैं। अन्त में प्यारा –सा निदान है– पीलू का अपने भाई को गुड़ देना। छोटी सी समस्या का प्यारा सा यह निदान और साथ ही पात्रों का चूज़े होना, इस कहानी को लोकप्रिय बना देता है।

मैं भी कहानी में भी पात्र हैं चूज़ा और बत्तख का बच्चा, जिनसे इस उस के बच्चे अपने आपको जोड़ पाते हैं। *बाघ का बच्चा* तकदीर जैसी कहानियों में समस्या थोड़ी बाद में स्थापित होती है और जल्दी ही सुलझ भी जाती है।

बच्चों की एक और लोकप्रिय कहानी में *महागिरी* जो चालीस सालों से छप रही है। यह अन्य कहानियों से काफी हटकर है। इस कहानी की उलझन या समस्या बीच कहानी में स्थापित होती है जब महागिरी नामक

हाथी गड्ढ़े में खम्बा गाड़ने से इन्कार कर देता है। कहानी के अन्त में यह एक छोटी बिल्ली को बचाता है। शायद छोटे बच्चे इस छोटे जीव से अपने आपको जोड़कर देखते हैं, इसलिए यह कहानी आज भी छोटे बच्चों ने इतनी लोकप्रिय है।

अधिकांश पुस्तकों की विषय–वस्तु शहरी मध्यमवर्गीय परिवारों की वास्तविकताओं से जुड़ी है। बहुत कम पुस्तकें गाँव के परिवेश को दर्शाती है। लाल पतंग और लालू और भोर भई दो ऐसी ही पुस्तकें हैं।

चित्र–कहानी में चित्र

चित्र कहानियों के चित्रों में काफी विविधता होती है। कई पुस्तकों के चित्र वास्तविक शैली में हैं, पर उनमें प्रकृति का बारीक अवलोकन झलकता है। कौआ डाल पर कैसे बैठता है, कैसे मुड़कर देखता है, जब उड़कर ज़मींन पर आता है जब उसका रूप कैसा होता है, यह *सोनाली का मित्र* में जगदीश जोशी के व *कौए की कहानी* में युद्धजीत सेनगुप्ता के चित्र दर्शाते हैं। *महागिरी* में पुलक विश्वास के चित्रों ने वास्तविक शैली में भाव भी उकेरे हैं। भावों को चरम पर लाते हुए जानवरों और इन्सानों के चित्रों में भी विभिन्नता है।

मैं भी, घर और घर, बुढ़िया की रोटी, बारात, रूपा हाथी, दस आदि कहानियाँ इस विभिन्नता को दर्शाती हैं। कुछ किताबें, *मुफ्त ही मुफ्त, जादुई बरतन तमिलनाडु और गुजरात* की लोकशैलियों में हैं।

कुछ पुस्तकें छायाचित्रों पर आधारित है, जैसे सागर। कुछ अन्य कोलाज शैली में चित्रित हैं, जैसे नन्हें चूज़े की दोस्त, छोटा सा मोटा सा लोटा, रसोईघर, क्या सही क्या गलत आदि। इन सभी पुस्तकों के माध्यम से बच्चों के सामने चित्रों का संसार खुलता है, जिससे उनकी चित्रण क्षमता भी बढ़ती है।

बच्चें की कविताएँ

ध्वनियों की लय, ध्वनियों के खेल, चाहे उनका कोई खास मतलब ना भी हो, उनमें छोटे बच्चे खूब मज़ा लेते हैं। जन्म से ही बच्चे किसी न किसी तरह लय का अनुभव करते हैं, चाहे वह थप्पी की लय हो, चाहे झूले की। शायद इसीलिए कहीं न कहीं उनमें तुकबन्दियाँ बनाने, ऊटपटाँग ध्वनियों से खेलने का स्वाभाविक गुण रहता है। यही तो छोटे बच्चों की कविता की जान होते हैं :

अक्कड़ बक्कड़ बम्बे बो
अस्सी नब्बे पूरे सौ
सौ में लगा धागा
चोर निकलकर भागा।

या फिरः

अटकन चटकन दही चटाकन
बाबा लाए सात कटोरी
एक कटोरी टूट गई
बाबा की टाँग टूट गई।

कविता *"रज्जू और कद्दू"* में प्रतिभा नाथ की लय का एक अनोखा अन्दाज़ है। इस तरह की गीत अपने बचपन से किसने नहीं गाए?

लोकशैली के ऐसे ही बालगीतों के दो संग्रह इस सूची में शामिल है *अब्बक–दब्बक और अक्कड–बक्कड।* *महंगू की टाई और बतूता का जूता* सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की ऊटपटाँग कविताओं के दो मज़ेदार संग्रह हैं।

हिन्दी में बच्चों की अधिकाँश कविताएँ वर्णनात्मक होती है। घटनाक्रम कविताएँ बहुत कम हैं। ऊटपटाँग कविताएँ जिनमें बच्चों को मज़ा आए,वे भी बहुत कम है। निरंकारदेव सेवक की *नन्हें–मुन्ने गीत* में छोटी–छोटी कविताएँ हैं, जो जानवरों पर आधारित हैं। इनमें वर्णन भी है, घटनाएँ भी है और लय भी है। एक झलक :

मुरगी माँ घर से निकली
झोला ले बाज़ार चली
बच्चे बोले चें चें चें
अम्मा हम भी साथ चलें

बतूता का जूता अनोखी और मज़ेदार घटनाओं का काव्य संग्रह है। इन कविताओं में कहीं जूता तूफान में पैर से निकलकर जापान पहुँच जाता है, तो कहीं मच्छर हाथी के कान में घुसकर गाना गाता है। या कहीं बन्दूक पिचकारी बनकर अलग–अलग चीज़ों में उलटे सीधे रंग–भर देती है। इस संग्रह में अँग्रेजी की लोकप्रिय कविताओं के अनुवाद भी है। जॉनी जॉनी यस पापा "रामू–रामू हाँ बापू" बन गई और "बा बा ब्लैक शीर्ष" कविता "बाबा भेड कलूटी" बन गई है।

रमेश थानवी की बाल कविताओं का संग्रह अपने आप में अद्भुत है। उनके संग्रह में से एक छोटी–सी ऊलजलूल फन्तासी इस तरह हैं :

बस में बैठे बीस
बाहर निकले तीस

बीस तीस का चक्कर
समझ ना पाया कंडक्टर
सारी बस थी खाली
कंडक्टर था जाली

इसमें लम्बी घटनात्मक कविताएँ भी हैं। जैसे जूँ के कुनबे का लड़की के सिर पर बसना या फिर रेलगाड़ी में नींद ना आना। इन घटनाओं को थानवी ने बहुत ही मज़ेदार ढंग से रखा है। रात के बारे में कविता में रात के अँधेरे में तारों का चित्र एक अनोखे ढंग से खिंचता है।

कविताओं की खासियत यह है कि वे ध्वनि, दृश्य, महक–स्वाद और एहसास की दुनिया आबाद कर देती हैं। प्रायः ध्वनि प्रधान कविताएँ ज़्यादा मिलती हैं। और कुछ वे जो दृश्य खींचती हैं, जैसे प्रयाग शुक्ल के संग्रह होली की कविता "गिलहरी"।

बिल्ली बोले म्याऊँ में विभिन्न तरह की कविताएँ हैं। कविताएँ जो तस्वीर खींचती हैं, जैसे "नाना–नानी", "फुग्गा" आदि। कविताएँ जिन्हें आगे बढ़ा सकते हैं, जैसे "क्या–क्या होता गोल", या "लम्बा क्या–क्या"। या फिर खाने की कविताएँ, जैसे "बन्दर मामा" या "जामुन"।

और अन्त में यह कि अधिकांश बच्चों की कविताओं में जो दोहराव रहता है और उनमें जो स्वाभाविक रुचि जगती है, इनके सहारे बच्चे बहुत आसानी से पढ़ना सीख सकते हैं। *दूध जलेबी जग्गग्गा* ऐसा ही एक कविता संग्रह है।

कुल मिलाकर इस उम्र के लिए उपलब्ध बाल साहित्य में चित्र–पुस्तकें, लोक कथाएँ और कविताएँ हैं, जो बच्चों में पढ़ने की ललक पैदा करती हैं। उनमें इस छोटी सी उम्र में पढ़ना सीखने की चाह जगाती है। इससे पढ़ना सीख पाने की मेहनत आधी हो जाती है।

पठन सामग्री

तीसरा दिन

सत्र–3 : कहानी सुनाने की ज़रूरत

कृष्ण कुमार

यह बड़े अफसोस की बात है कि हमारे प्राइमरी स्कूलों में पहली दो कक्षाओं के लिए प्रतिदिन कहानी सुनाने की कोई अलग 'घण्टी' नहीं होती। यदि ऐसी व्यवस्था होती तो बच्चों को स्कूल में टिकाए रखने की

समस्या कम से कम एक हद तक सुलझ जाती। बहुत से लोग कहेंगे कि मैं इस समस्या की गम्भीरता की अवहेलना कर रहा हूँ। बहुत सम्भव है कि मेरा सुझाव सुनकर कई ऊँचे अधिकारी हिकारत के भाव से मुस्कुराएँ। उनके विशाल अनुभव और प्रशासनिक ज्ञान ने यह समझ अवश्य उनके दिमाग से हटा दी होगी जो मेरी समझ में उनके पास एक समय में ज़रूर रही होगी, कि कहानी सुनाने का बच्चों पर एक जादुई असर होता है

यह बहुत ही गहरे अफसोस की बात है कि हमारी अध्यापक प्रशिक्षण संस्थाएँ भी कहानी सुनाने की गम्भीरता से नहीं लेतीं। हालाँकि उनमें से कुछ अपने पाठ्यक्रम में कहानी सुनाने के महत्व का ज़िक्र कर देती है।

मेरे मन में एक ऐसे दिन की कल्पना है जब छोटे बच्चों को पढ़ाने बाले हर शिक्षक से यह अपेक्षा की जाएगी कि कम से कम तीस पारम्परिक कहानियों पर उसका अधिकार हो। अधिकार से मेरा आशय है कि ये कहानियां उसे अच्छी तरह याद हों ताकि वह उन्हें इत्मीनान और आत्मविश्वास के साथ सुना सकें। यह एक ऐसे समाज के लिए कोई बड़ी बात नहीं है जिसके पास हजारों कहानियों की एक लम्बी विरासत है। तीस ऐसी कहानियाँ, जिन्हें अध्यापक अपनी मर्ज़ी से जब चाहे सुना सकें, प्राइमरी स्कूल के पहले दो दर्ज़ों का माहौल बदल कर रख देंगी। शर्त इतनी भर है कि दैनिक पाठ्यक्रम में कहानी सुनाने को एक सम्मानजनक जगह इस खातिर दी जाए कि कहानी सुनाना अपने आप में महत्वपूर्ण है।

कहानियाँ कहाँ से लाएँ ?

पिछले पैराग्राफ में मैंने एक विशेषण का इस्तेमाल किया है जिसे मैं अब आगे बढ़ने से पहले स्पष्ट करना चाहता हूँ। मैंने लिखा है कि मैं पारम्परिक कहानियॉ सुनाने के पक्ष में हूँ। युवा अध्यापकों को कहानी सुनाने का प्रशिक्षण देने का मेरा अनुभव बताता है कि जब उनसे सुनाने लायक कहानियाँ तलाशने को कहा जाता है, तो वे प्रायः बच्चों को किसी पत्रिका में छपी हुई कहानियाँ ले आते हैं। उनमें से कुछ लोग कॉमिक्स कथाएँ उठा लाते हैं और कुछ लम्बे चुटकुले और असली घटनाओं के बयान याद करके ले आते हैं। यह सही है कि इस किस्म की सामग्री को भी 'कहानी' की श्रेणी में रखा जा सकता है, लेकिन इस तरह की प्रत्येक कहानी से हम प्राइमरी स्कूल में पढ़ने वाले छः या सात साल के बच्चों पर जादुई असर करने की उम्मीद नहीं कर सकते।

परम्परा से मिली हुई कहानियों में ऐसी विशेषताएँ होती हैं जो समकालीन कहानियों में, जिन्हें हम विविध रूपों और माध्यमों में देखते हैं, अनिवार्यतः नहीं पाई जाती। इन विशेषताओं की चर्चा हम जल्दी करेंगे, लेकिन पहले में पारम्परिक कहानियों के कुछ स्रोतों का ज़िक्र करना चाहूँगा। सबसे पहले पंचतंत्र, जातक,

महाभारत, सहस्त्र रजनीचरित्र, विक्रमादित्य की कहानियाँ और विभिन्न इलाकों की लोककथाएँ सहज और समृद्ध स्रोतों की श्रेणी में रखी जा सकती है। इसके बाद हम कथासरितसागर, गुलिस्ताँ और बोस्ताँ की कहानियाँ और दुनिया भर की लोककथाओं और परीकथाओं को रख सकते हैं। ये स्रोत आसानी से उपलब्ध नहीं हैं। इसलिए यदि कोई पाठ्यक्रम में कहानी सुनाने को एक नियमित जगह देना चाहता है तो उसे इनमें तमाम स्रोतों से चुनी गई कहानियों का एक संकलन बनाना होगा।

कहने लायक कहानी

एक अच्छी कहानी में कौन–सी विशेषताएँ होती हैं, यह जानने के लिए एक सरल रास्ता एक ऐसी कहानी की जाँच करने का है जिसे बच्चे पीढ़ियों से आनन्दपूर्वक सुनते आ रहे हैं। पंचतंत्र की शेर और ख़रगोश की कहानी एक ऐसा उदाहरण है। इस कहानी का कथानक उतना आसान नहीं है जितना हम कहानी से अपने परिचय के कारण मान लेते हैं। क्यों न हम पहले इस कहानी के प्रमुख मोड़ याद कर लें।

कहानी में एक दिन वह आता है जब नन्हें खरगोश को बूढ़े शेर के सामने पेश होना होता है। शेर के दरवाज़े तक पहुँचने में खरगोश ने इतनी देर कर दी है कि शेर भूख के मारे पागल हो रहा है। यह निर्णायक क्षण शेर के साथ किसी भी तरह की सौदेबाज़ी के लिए एकदम अनुपयुक्त है क्योंकि शेर गुस्से से बुरी तरह भरा बैठा है, लेकिन खरगोश अनुपयुक्त क्षण में अपनी बात रखता है। उसे इतनी देर कैसे हो गई? रास्ते में एक दूसरे शेर से मिलने की बात पूरी तरह झूठ है, लेकिन ये बात भूखे नाराज़ शेर के शाही दिमाग में बैठ जाती है। अब वह पहले अपने प्रतिद्वन्दी से निपटना चाहता है, और इसके लिए वह खरगोश के साथ उस कुएँ की तरफ चल पड़ता है, जहाँ दूसरे शेर के रहने की बात उसे बताई गई। इस दूसरे निर्णायक क्षण में खरगोश अपनी धोखेबाज़ी और शेर की पागल नाराज़गी और ईर्ष्या–जिसे उसी ने जगाया है–पर भरोसा करके आगे बढ़ता है। कुएँ में अपनी परछाई देखकर शेर अपना आपा खो बैठता है और कूद कर मर जाता है।

आइए, इस पुरानी, परिचित कहानी को ज़रा बारीकी से देखें। पहली बात तो यह है कि कहानी की विषयवस्तु में कोई उलझाव नहीं है। उल्टे, यह कहानी सीधे–सीधे इस तरह के गम्भीर सवालों से जूझती है, जैसे कि किसी की पाश्विक ताकत के सामने या मौत के वास्तविक खतरे से खुद को कैसे बचाया जाए। आमतौर पर बच्चों से बातचीत के दौरान हम ऐसे प्रश्नों को ही उठाते हैं लेकिन ज़ाहिर है कि बच्चों की ऐसे प्रश्नों में गहरी रुचि होती है। हम पूछ सकते हैं कि इस रुचि का क्या कारण है पर इस सवाल की चर्चा मैं कुछ देर में करूँगा। इस बीच में एक बड़ी विशेषता पर विचार करना चाहता हूँ। यह कहानी एक ऐसे छोटे प्राणी की है जो एक बड़े ताकतवर प्राणी द्वारा पैदा की गई मुसीबत में जूझ रहा है। इस मुसीबत

से बचने के लिए छोटा प्राणी एक ऐसी तरकीब का प्रयोग करता है जिसे हम आमतौर पर अनैतिक कहते हैं।

इस तकरीब पर अमल करते समय खरगोश व्यक्तित्व के कुछ उम्दा गुणों की मिसाल पेश करता है। इन गुणों से साहस, खतरे के सामने आत्मविश्वास, किसी घटना के अन्तिम क्षण तक अपना दिमाग ठण्डा रखने की क्षमता और अपने से ज़्यादा ताकत और उम्र वाले से उचित बरताब करना शामिल है।

हमें इस बात पर भी गौर करना चाहिए कि कहानी कितनी तेज़ गति से आगे बढ़ती है। शुरुआत में एक अजीब–सी व्यवस्था लागू की जाती है जिसके तहत रोज़ एक जानवर स्वेच्छा से बूढ़े राजा का शिकार बनेगा। इस तरह की दैनिक व्यवस्था स्थापित होने के बाद जल्दी ही छोटे खरगोश की बारी आती है और कहानी का केन्द्रीय हिस्सा प्रकट होता है बाकी घटनाएँ बहुत तेज़ी से घटी हैं, क्योंकि अपने को बचाने की एक खतरनाक रणनीति तय कर लेने के बाद खरगोश एक भी क्षण बरबाद नहीं कर सकता। यह स्पष्ट रहता है कि सुनने वाले के पास इस बात का कोई विकल्प नहीं है कि वह स्थिति को खरगोश की निगाह से देखे।

यह संक्षिप्त विश्लेषण उन कारणों की पहचान के लिए पर्याप्त है जिनसे इस कहानी को बच्चों के बीच भारी लोकप्रियता मिली है। सबसे पहली बात यह है कि कहानी उन्हें एक ऐसा चरित्र या हीरो देती है जिसके साथ वे पूरा तादात्म्य बिठा सकते हैं। यह चरित्र है खरगोश। कहानी में उसकी भूमिका उसी तरह की चुनौतियों और मुसीबतों से गुज़रती है जैसे कि बच्चे अपने दैनिक जीवन में अक्सर महसूस करते हैं। वह छोटा और शक्तिहीन है; उसे एक ऐसा काम करना है जो वह करना नहीं चाहता; उसे एक ऐसे प्राणी के हाथों मारे जाने का डर है जिसके पास पूरी सत्ता भी है और शारीरिक ताकत भी। खरगोश की परिस्थिति के इन पहलुओं से मिलते–जुलते पहलू हर बच्चे की ज़िन्दगी में उभरते रहते हैं। यद्यपि हम उन्हें अक्सर देख नहीं पाते क्योंकि हम माता–पिता और अध्यापक की भूमिकाएँ निभाने में बेहद व्यस्त रहते हैं। उदाहरण के तौर पर हममें से बहुत कम लोग यह जानते हैं कि अचानक होने वाली मृत्यु का डर बचपन में चिन्ता के सबसे बड़े स्रातों में शामिल है। किसी बड़े और मज़बूत व्यक्ति से आमना–सामना होने की आशंका भी इसी प्रकार की चिन्ता पैदा करती है।

कहानी शुरू होते ही बच्चों का ध्यान इसलिए खींचती है क्योंकि बच्चे स्वयं को कहानी में देख सकते हैं। इसके बाद कहानी में होने वाली घटनाओं से उनके आकर्षण को बल मिलता है। नन्हा खरगोश एक रणनीति चुनता है और वह कारगर सिद्ध होती है। वह न केवल उसके लिए सफल होती है, बल्कि समस्या को हमेशा के लिए और सबके लिए खत्म कर देती है। छोटे बच्चों को इसी तरह का हल पसन्द आता है।

खरगोश की रणनीति के आकर्षण का एक और कारण यह है कि वह बच्चों में हमेशा पाई जाने वाली एक भोली–भाँली इच्छा पर आधारित है–बहाना बनाने की इच्छा। देरी से आने के खरगोश द्वारा दिए गए बहाने में एक और आकर्षण यह है कि उसका उद्देय अपनी जान बचाना नहीं, शेर को मारना भी है। वास्तव में खरगोश की दुविधा इसलिए इतनी कठिन है क्योंकि वह अन्यायी को जान से मारे बगैर खुद को बचा नहीं सकता। इसी तरह कहानी बच निकलने का एक ज़बरदस्त नाटक पेश करने के लिए बहादुरी से किए गए नाश का इस्तेमाल करती है। यदि उसमें कोई नैतिकता है तो वह आत्मरक्षा की नैतिकता ही है। इस बात को भी हम तभी ठीक से देख सकते हैं जब हम कहानी को बच्चे की निगाह से देखें। यदि हम बड़ों की निगाह से इस कहानी को देखने की ज़िद करें तो हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचेंगे कि यह एक अनैतिक कहानी है – जैसी कि दरअसल वह है भी।

ज़रूरत क्या है?

अब तक यह स्पष्ट हो गया होगा कि बच्चों के लिए एक अच्छी कहानी सुनने का नैतिकता या नैतिक शिक्षा से कोई सम्बन्ध नहीं है या कम से कम सीधा सम्बन्ध नहीं है। अधिक गहरे स्तर पर खरगोश और शेर की कहानी में एक प्रेरक बात है वह दिखाती-है कि खतरे के सामने दिमाग ठण्डा रखने के क्या फ़ायदे हैं; कहानी यह भी दिखाती है कि सोच–समझ और कल्पना से काम लेना कितना महत्वपूर्ण है। लेकिन ये बातें पारम्परिक अर्थ में 'नैतिक शिक्षा' नहीं कही जा सकती। वास्तव में महान पारम्परिक कहानियाँ शायद ही पारम्परिक अर्थ में नैतिक शिक्षा देती हों। हमारे दिए ज़्यादा ज़रूरी इस बात पर गौर करना है कि कहानी सुनाने का उद्देश्य बच्चे का नैतिक विकास करना नहीं हैं। कहानी सुनाने से होने वाले लाभ काफ़ी अलग है, और वे इस प्रकार हैं।

कहानियाँ अच्छी तरह सुनने की क्षमता का विकास करती हैं: अच्छा श्रोता कौन है? वह जो अन्त तक सुनता रहे। यह बात हम बहुत से लोगों के बारे में नहीं कह सकते। यहाँ तक कि औपचारिक बहसों के दौरान भी लोग लगातार टोकते रहते हैं। इसका कारण उनकी यह मानकर चलने की आदत है कि उन्हें पहले से पता है कि बोलने वाला क्या कहेगा। एक और कारण यह है कि उनमें सुनने का धैर्य नहीं होता। आश्चर्य की बात नहीं है कि सुनने को अब सिर्फ एक कौशल नहीं, बल्कि एक रवैया माना जाने लगा है जिसे प्रोत्साहित करने के लिए ऊँचे स्तर के प्रबन्धन और प्रशासन के कोर्स उपलब्ध है। कहानी सुनाने से हमारी जिन्दगी के इस निर्णायक दौर में धैर्यपूर्वक सुनने को क्षमता विकसित होती है जब सुनने की आदत और उसमें निहित रवैया जीवन भर चलने वाली आदतों का रूप ले सकते हैं।

यह बात थोड़ी अजीब है कि अच्छे श्रोता हमारे उस देश में दुर्लभ हो गए है जहाँ एक पुरानी और मज़बूत मौखिक संस्कृति रही है। मेरा अन्दाज़ है कि इस परिस्थिति का सम्बन्ध बचपन में कहानी सुनाने की अवहेलना से है। ऐसा लगता है कि आधुनिक भारत के पास बच्चों को नियमित रूप से कहानी सुनाने का समय नहीं है। इसी कमी के परिणाम अब स्पष्ट होते जा रहे हैं।

कहानी सुनाने में अन्दाज़ लगाने का प्रशिक्षण मिलता है; अपनी पसन्द की कहानियाँ बच्चे बार–बार सुनना चाहते हैं। इसका कारण यह है कि कहानी से एक बार परिचय हो जाने पर वे इस परिचय का इस्तेमाल ग़ौर से सुनने की अपनी बढ़ती हुई क्षमता का परीक्षण करने के लिए करने के लिए करते हैं। स्वाभाविक है कि यह परीक्षण अनजाने में होता है। बच्चों को इस बात से खुशी होती है कि कहानी को दूसरी या तीसरी बार सुनते समय वे सफलतापूर्वक अन्दाज़ लगा सकते हैं कि आगे क्या होगा। अन्दाज़ के सही सिद्ध होने का आनन्द ही वह इनाम है जो कहानी सुनने से एक अनुभवी श्रोता को मिलता है; और यह सिर्फ आनन्द नहीं है। इससे कहानी सुनने वाले बच्चे की अन्दाज़ लगाने की क्षमता में विश्वास भी बढ़ता है। सर्वांगीण विकास में इस विश्वास की एक गहरी भूमिका होती है–खासकर पढ़ने की क्षमता के विकास में। यह क्षमता स्कूल के शुरुआती दो वर्षों की सबसे बड़ी चुनौती होती है। साक्षरता और पढ़ने की क्षमता के विकास में अन्दाज़ लगाने की क्षमता के योगदान की विस्तृत चर्चा मैंने अपनी पुस्तक 'बच्चे की भाषा और अध्यापक' में की है।

अन्दाज़ लगाने की क्षमता का महत्व अन्य विषयों; विशेषकर गणित और विज्ञान, में भी है। गणित की पढ़ाई में नियमों के इस्तेमाल से समस्या का हल निकालने का सैद्धांतिक महत्व है। कहानियों में भी नियम होते हैं। फर्क यही है कि ये नियम रूपकों की शक्ल में होते हैं। मिसाल के तौर पर कई कहानियाँ इस नियम का पालन करती हैं कि छोटे प्राणी बड़ों को धोखा देकर विजय प्राप्त करते हैं। खरगोश और शेर की कहानी में यही होता है। कहानियाँ सुनते–सुनते बच्चे उनमें निहित नियम पकड़ लेते हैं, और यह पकड़ उनकी अन्दाज़ लगाने की क्षमता को बेहतर बनाती है।

कहानियाँ हमारी दुनिया को फैलाती है : मैं उस दुनिया की बात कर रहा हूँ जिसे हम अपने सिर या दिमाग में लेकर चलते हैं। कहानियाँ उसे इस अर्थ में फैलाती हैं कि हम उनके ज़रिए ऐसे लोगों और स्थितियों को जान लेते हैं जिनसे हमारा वास्ता अपनी ज़िन्दगी में कभी नहीं पड़ा।

सवाल है कि ऐसे लोगों या स्थितियों को जानने में क्या फ़ायदा है? फ़ायदा यह है कि वे जीवन का अंग है। भले हम व्यक्तिगत रूप से उन्हें न जानते हों पर वे हमें दिमागी रूप से परेशान करती है, खासकर बचपन में–लेकिन एक सामान्य अर्थ में यह परेशानी जीवन भर चलती है। उदाहरण के लिए छोटे बच्चे बुरे

आदमियों की फ़िक्र करते रहते हैं, भले हीं उनके आसपास कोई बहुत बुरा आदमी न हो। इसी तरह वे भीतर ही भीतर यह आशा करते हैं कि उन्हें किसी बेहद होशियार, सुन्दर या अच्छे इन्सान से मिलने का मौका मिलेगा। आदर्श रूप की कल्पना और भयंकर विपत्ति का डर दोनों ही बाल मनौविज्ञान में शामिल है। पारम्परिक कहानियाँ इस मनोविज्ञान को व्यंजित करती हैं, और इसीलिए वे बच्चों को आसानी से खींच लेती हैं। कहानी सुनने से छोटा बच्चा जो अभी साक्षर नहीं बना है, अपनी वास्तविक दुनिया से कहीं बड़ी दुनिया के कल्पित रूप का अनुभव पा लेता है।

एक बात और भी है कि कहानियों से मिलने वाला अनुभव बेतरतीब नहीं होता। उलटे, यह अनुभव हमारी अराजक दुनिया को एक संतोषजनक क्रम या बनावट में ढाल देता है। एक गहरे अर्थ में यह एक 'नैतिक' बुनावट होती है लेकिन एक आम अर्थ में नहीं। कमज़ोर जीतता अवश्य है, लेकिन कई बार गलत साधनों का प्रयोग करके। भूखे शेर से खरगोश का झूठ बोलना एक उदाहरण है।

कहानियाँ शब्दों को अर्थ देती है; अन्त में, कहानी कहने का महत्व हम बच्चे के भाषायी साधनों के विस्तार में देख सकते हैं। शब्द एक बहुत ही निजी संपत्ति होते हैं। वे हमें एक बहुत निजी अर्थ में संसार की चीज़ों को अलग–अलग नाम देने की क्षमता देते हैं। लेकिन दूसरी तरफ शब्द एक ऐसी सामाजिक संपत्ति भी है। जिसका इस्तेमाल हम दूसरों से अपने अनुभव बाँटने के लिए करते हैं। शब्दों की यह दोतरफ़ा प्रकृति ही उन्हें अर्थ देती है। उदाहरण के लिए बच्चे को अपने निजी अनुभव से यह मालूम होता है कि भूख लगने पर शेर को कैसा महसूस हो रहा होगा। कहानी बच्चे को 'भूखा' शब्द का अर्थ इस तरह फैलाने में मदद देती है कि उसमें शेर भी शामिल हो जाए। बच्चे जितनी ज़्यादा कहानियाँ सुनेंगे, उनकी शब्दावली में उतना ही दूसरों के अनुभवों का अर्थ शामिल करने की सामर्थ्य आती जाएगी। इस तरह देखें तो बचपन में सुनी गई कहानियाँ आगे चलकर पढ़ने की क्षमता का आधार बनती है।

वास्तव में कहानी के संदर्भ में ऊपर कही गई बातें पढ़ने पर भी लागू होती है। पढ़ने की क्षमता बच्चों का परिचय भाषा में निहित नियमों और संरचनाओं से कराती हैं। अच्छी तरह पढ़ने की क्षमता होशियारी से अन्दाज़ लगाते चलने की आदत पर निर्भर है। भाषा के नियमों से परिचित होकर बच्चे यह अन्दाज़ लगा लेते हैं कि वाक्य या कथन में आगे क्या आने वाला है। इस दृष्टिकोण से कहानी सुनाना बच्चों को साक्षर बनाने के लिए उपयोगी है।

कौशल पर अधिकार

कहानी सुनाने की कला पर अधिकार पाने के इच्छुक व्यक्ति के लिए ज़रूरी है कि वह स्मृति को गम्भीरता से ले। यदि कहने वाले को कहानी ठीक से याद नहीं है तो वह अच्छी से अच्छी कहानी को भी चौपट कर

सकता है। याद कर लेने से आत्मविश्वास बढ़ता है और कहानी कहने वाला इत्मीनान महसूस करता है। कहानी सुनने वालों से रिश्ता बनाने के लिए इत्मीनान या चैन बहुत जरूरी है। दूसरी बात यह है कि जब तक कहानी अच्छी तरह याद हो जाती है तो कहने वाला उसे एक खाके या खाली नक्शे की तरह इस्तेमाल कर सकता है। इस नक्शे को अपनी सुविधा या सुनने वालों के मूड के अनुसार भरा जा सकता है। कहानी को छोटा या बड़ा करना बहुत महत्वपूर्ण होता है। किसी दिन आप चाहते हैं कि जल्दी–जल्दी उस बिन्दु पर पहुँच जाएँ जहाँ खरगोश शेर के सामने खड़ा है। किसी और दिन आपकी इच्छा होती है कि कहानी के पहले हिस्से को फैलाएँ, इस बात को विस्तृत चर्चा करें कि भोजन के इन्तज़ार में शेर के मन में कैसे–कैसे विचार आ रहे होंगे और उसकी गुफ़ा की तरफ जाते हुए खरगोश के दिमाग में कौन–कौन सी बातें और रणनीतियाँ उभर रही होंगी।

कहानी को लेकर बच्चों के साथ संवाद कई तरह के विकल्प पेश करता है। आप चाहें तो नाटकीय ढंग से दो आवाज़ों में बोलें, इशारों या मुद्राओं से भी काम लें। संवाद को सजीव बनाने के लिए आप हाथ की कठपुतलियों का प्रयोग भी कर सकते हैं। आप कमरे के एक कोने से दूसरे कोने तक चलकर दोनों चरित्रों की भूमिका खुद निभा सकते हैं। ये सभी सम्भावनाएँ रोचक हैं और वे हमें इस बात की चुनौती देती हैं कि हम एक ही कहानी को साल–दर–साल या एक ही साल में कई बार सुनाते हुए अपना सामर्थ्य बढ़ाते चलें।

कहानी सुनाना यदि किसी शिक्षक की दैनिक ज़िन्दगी में शामिल है तो वह कभी उबाऊ नहीं हो सकती। पर कहानी को रोज़ की घटना बनाने के लिए यह ज़रूरी है कि हम प्राइमरी स्कूल के पाठ्यक्रम की अपनी धारणाओं को गम्भीरतापूर्वक बदलें।

खरगोश कैसे बुद्धिमान कहलाया जाने लगा

बहुत समय पहले की बात है, एक दिन जंगल का राजा शेर भोजन के लिए रोज़–रोज़ शिकार करते–करते थक गया। उसने सोचा, चूँकि सब जानवर निर्विवाद रूप से उसे अपना राजा मानते हैं, इसलिए वह शिकार के पीछे भागने के बजाए, जानवरों को आज्ञा दे देगा कि उनमें से कोई एक रोज़ाना उसकी भूख मिटाने के लिए आ जाए।

उसने जंगल के जानवरों को अपने पास बुलाया और कहा– 'मेरे प्रजागणों, मुझे अपने भोजन के लिए रोज़ाना शिकार करना होता है, इससे सारा जंगल मेरे कारण डरा रहता है। मैं तो रोज़ केवल एक ही जानवर को मार कर खाता हूँ, पर आप सब डरे–डरे रहते हैं। अब हम लोग एक तर्क–संगत व्यवस्था कर लेते हैं रोज़ सुबह होते ही एक जानवर मेरे द्वारा खाए जाने के लिए

अपने आप को मेरे सामने प्रस्तुत करेगा। ये आप आपस में फैसला कर सकते हैं कि वह कौन–सा जानवर होगा।

इस तरह मैं शिकार करने की परेशानी से बच जाऊँगा। इसका मतलब यह भी होगा कि आप सब जंगल में निडरता से घूम सकेंगे। जानवरों ने आपस में विचार–विमर्श किया और माना कि यह एक तरीका है, जो सभी के लिए फायदेमंद है। उन्होंने तय किया कि हर रोज़ शाम को एक पर्ची निकाली जाएगी। जिसका नाम पर्ची पर लिखा होगा वही अगले दिन शेर का भोजन बनेगा। यह नई योजना तुरन्त लागू कर दी गई; शाम को पर्ची निकाली जाती और सुबह एक बेचारा जानवर शेर के नाश्ते के लिए पेश हो जाता यह तो सच है कि वह उस जानवर के लिए बहुत खराब बात होती, परन्तु इससे बाकि सभी जानवरों को घात लगाए घूमते शेर का डर नहीं रहता था, वे जंगल में आज़ादी से रह सकते थे। योजना सही तरह काम करती लग रही थी।

एक शाम को जब ख़रगोश के नाम की पर्ची निकली तो उसने यह घोषणा कर दी कि उसका, शेर का भोजन बनने का कोई इरादा नहीं है।

इस पर लोमड़ी बोली– शेर अपना वादा रख रहा है और अब 'हम निडरता से बाहर घूम सकते है।'

बन्दर बोला – 'ख़रगोश अगर तुम नहीं गए तो तुम हम सब को खतरे में डालोगे।' मैं इस निष्ठुर को हमेशा के लिए खत्म कर दूंगा, खरगोश ने ऐसे विश्वास के साथ कहा जैसा विश्वास वह असल में महसूस नहीं कर रहा था। 'देखना! कभी तुम सब मुझे धन्यवाद दोगे।' जंगली मुर्गा बोला– 'अगर हमने देखा कि शेर फिर शिकार के लिए घूमने लगा है तो हम सब तुम्हें शुक्रिया नहीं कहेंगे।' 'यह सब तुम मुझ पर छोड़ दो'–ख़रगोश बोला और आराम से लेट गया। परन्तु ख़रगोश सोया नहीं। वह घण्टों लेटा–लेटा सोचता रहा कि ऐसा क्या हो सकता है, जिससे वह अपनी और अपने साथियों की मदद कर सके और जंगल को उस दुष्ट शेर से छुटकारा मिल जाए। सुबह होते–होते उसे एक उपाय सूझा। जब उसने सब कुछ विस्तार से सोच लिया और उसे तसल्ली हो गई कि उसकी योजना काम करेगी, तब वह अपने आप को तरो–ताज़ा महसूस करने के लिए थोड़ा सो लिया। वह शेर की गुफ़ा तक पहुँचा जब सूरज ऊपर तक चढ़ आया था। शेर बेसब्री से उसका इन्तज़ार कर रहा था और ज़ोर–ज़ोर से गुर्रा रहा था। वह गुस्सा था, क्योंकि एक तो ख़रगोश का देर से आना उसके अपमान का प्रतीक था और दूसरा वह भूखा भी था। जैसे ही ख़रगोश आगे बढ़ा, शेर दहाड़ा 'क्या तुम मेरा नाश्ता हो?' 'हाँ सरकार', ख़रगोश ने आदर से उत्तर दिया। तुम देर से क्यों आए?' 'मैं बताता हूँ, सरकार', ख़रगोश बोला। 'तड़के जब मैं यहाँ आ रहा था तो मुझे एक दूसरे शेर ने रोक लिया। उसने

कहा कि मैं आगे नहीं जा सकता क्योंकि वह मुझे नाश्ते में खाना चाहता है। मैंने उनसे मिन्नत की कि मैं नहीं रुक सकता, मुझे जंगल के राजा की आज्ञा के अनुसार, उनके पास पहुँचना है। इस पर वह बहुत गुस्सा हो गया और कहने लगा कि 'वह जंगल का राजा है', और, वह दहाड़ा, 'जाओ और जाकर मेरा अधिकार छीनने वाले शेर को कहो कि, मैं यहाँ हूँ और मैं आकर तुम्हें मार डालूँगा। बाकी सभी जानवरों को भी कह दो कि जंगल का असली राजा आ गया है और वह पाखण्डी को भगा देगा' 'इसलिए सरकार' खरगोश आगे बोला, 'मैं आपको सावधान करता हूँ कि आपकी जान को बहुत खतरा है।'

शेर को अपनी भूख और अनादर के कारण बहुत गुस्सा आ गया। वह ज़ोर से चिल्लाया, 'पाखण्डी पाखण्डी तो वह है, मुझे अभी उसके पास ले चलो, मैं उसे दिखाऊँगा कि कौन जंगल का राजा है।'

खरगोश चल पड़ा और उसके पीछे—पीछे चल पड़ा शेर ।

'अब ध्यान से चलें' ख़रगोश फुसफुसाया। 'हम उस बगावती लुटेरे की गुफ़ा तक पहुँच रहे हैं।' वास्तव में वह ख़रगोश, शेर को एक गहरे कुएँ की तरफ ले जा रहा था। जब वह वहाँ पहुँचा तो उसने शेर को थोड़ा रुकने को कहा और खुद धीरे से कुएँ के पास आया। फिर वह किनारे के ऊपर से नीचे पानी को ध्यान से देखने लगा। उसने अपने छोटे से चेहरे का साफ प्रतिबिम्ब देखा। फिर उसने शेर को आवाज़ दी और कहा – 'वहाँ नीचे देखिए, सरकार, वही है जो आपका शासन छीनना चाहता है।'

शेर गुस्से से त्यौरियाँ चढ़ाता और बड़—बड़ करता कुएँ की दीवार के किनारे तक पहुँच गया। उसने जब नीचे झाँका तो उसे एक क्रोधित शेर त्यौरी चढ़ा और बड़—बड़ करता हुआ मुँह दिखा जो उसे घूर रहा था। वह उस दुश्मन पर कूदा, थोड़ी देर छटपटाया और फिर डूब गया।

खरगोश फटाफट दूसरे जानवरों के पास वापिस पहुँचा और यह घोषणा कर दी कि उसने शेर को मार दिया है, अब उन सब के डरने के दिन खत्म हो गए है। फिर उसने सबको अपने कारनामे की कहानी सुनाई और बताया कि उसने यह सब कैसे किया। सभी जानवरों में उसकी चतुराई की खूब प्रशंसा की।

उस दिन के बाद से जानवर अपनी समस्याएँ सुलझवाने और झगड़े दूर करने के लिए हमेशा ख़रगोश से गुज़ारिश करते और उसके पास सलाह लेने जाते। बस इसी तरह वह 'बुद्धिमान खरगोश' के नाम से जाना जाने लगा।

पठन सामग्री

चौथा दिन

सत्र–1 :पढ़ने और लिखने का सम्बन्ध

परम्परागत समझ हमें यह बताती है कि पढ़ना और लिखना दो भिन्न 'कौशल' हैं। इस समझ में यह विचार भी शामिल है कि पढ़ना 'ग्राही' कौशल है और लिखना 'उत्पादी' कौशल है तथा पढ़ने और लिखने का क्रमबद्ध तरीके से विकास होता है। अक्सर यह देखने को मिलता है कि कक्षा में लिखना सिखाने का स्थान पढ़ना सीखने के बाद आता है। इस क्रम में पढ़ना सीखने से पहले आता है और लिखना बाद में। हालाँकि पढ़ना सीखने से पहले स्कूलों में अक्सर पहली के बच्चे घण्टों तक अक्षरों की आकृतियाँ अपनी कॉपियों में उकेरते रहते हैं। कुछ शिक्षक ऐसा मानते हैं कि इस अभ्यास से बच्चे अक्षरों से परिचित हो जाएँगें और पढ़ने की और बढ़ेंगे।

दोनों ही प्रक्रियाओं में कई ऐसी समानताएँ हैं जो इसे एक दूसरे की पूरक बनाती है जैसे पढ़ना और लिखना दोनों ही सोद्देश्य होता है। पढ़ते समय पाठक अर्थ निर्मित करते चलता है इसी प्रकार लिखते समय भी लिखने वाला अर्थ का निर्माण करते चलता है। पढ़ते वक्त हम कई बार अपने अर्थ को संशोधित करते हैं, उसे दुबारा पढ़ते है वैसे ही लिखते समय हम अपने लिखे हुए को संशोधित करते चलते हैं। पढ़ने और लिखने दोनों ही प्रक्रियाओं के अन्त में हम एक अन्तिम अर्थ का निर्माण करते हैं।

पिछले कुछ दशकों में 'स्कूल जाने से पहले बच्चों में विकसित हो रही लिखित भाषा की अवधारणा को समझने के लिए कई शोध किए गए हैं। इन शोधों के निष्कर्ष इस प्रकार हैं–

- बच्चे अपने आसपास हो रहे लिखित भाषा के इस्तेमाल से पढ़ने और लिखने के बारे में कुछ अवधारणाएँ बनाने लगते हैं।
- पढ़ने और लिखने को लेकर यह समझ बन रही है कि पढ़ना और लिखना दो भिन्न प्रक्रियाएँ नहीं है बल्कि एक दूसरे से इस प्रकार से अन्तर्संबधित हैं कि पढ़ने के बारे में बनी अवधारणा लिखने को भी प्रभावित करती है। उदाहरण के लिए, जब कोई बच्ची अपनी माँ को कैलेंडर में किसी तारीख पर निशान लगाकर यह लिखते देखती है कि 'गैस का सिलेंडर बदला' तो वह बच्ची सिर्फ़ की एक गतिविधि नहीं देख रही है। ज़ाहिर है कि लिखने की इस प्रक्रिया में पढ़ना भी शामिल है।

इस एक क्रियाकलाप में पढ़ने लिखने से सम्बन्धित बहुत–सी अवधारणाएँ और समझ समाहित हैं। गौर करने लायक बात यह है कि यहं एक सार्थक गतिविधि है जो किसी भी घर में (जहाँ कोई पत्रिका या अखबार न भी आता हो) घट सकती है। शायद इस एक मौके से समझ कर बच्ची खुद किसी खास तारीख पर निशान लगाकर कैलेंडर का इस्तेमाल करना चाहे। जैसे यह दिखाने के लिए कि उसके दादा–दादी घर आ रहे हैं, वह 22 अक्टूबर पर गोला लगाकर दो चेहरे बना दें। यह कर पाने के लिए शायद उसे बड़े भाई–बहन या माता–पिता की मदद लेनी पड़े।

स्कूल में दाखिले से पहले के दौर में बच्चे ऐसे कितने ही आम और रोज़मर्रा के क्रियाकलाप देखते हैं जो उन्हें लिखित भाषा के ज़रिए पढ़ने–लिखने से परिचित होने का मौका देते हैं।

पढ़ने लिखने का शुरुआती दौर

इस दौर में यह ज़रूरी नहीं है कि बच्चा पढ़ने–लिखने के उसी स्वरूप से परिचित हो जिससे कि एक वयस्क होता है। पहले दिए गए उदाहरण में बच्ची 22 तारीख को चिह्नित करके यह लिखती नहीं कि दादा–दादी घर आ रहे हैं। वह एक चित्र के ज़रिए इस बात को अंकित करती है। यह चित्र उतना ही सार्थक है जितना कि एक लिपिबद्ध वाक्य। बच्ची लिखने के बारे में यह अवश्य समझ गई है कि किसी चिह्न की मदद से अपनी बात को रिकॉर्ड किया जा सकता है और कुछ समय बाद उस लिखे गए से वह अर्थ पाया जा सकता है जो लिखते समय सोचा गया था। जब यह बच्ची 20 या 21 अक्टूबर को कैलेंडर देखेगी तो 22 तारीख पर बने हुए चेहरों को 'पढ़कर' उसके दिमाग में यही विचार आएगा कि दादा–दादी घर आने वाले हैं।

इस उदाहरण में पढ़ने–लिखने की ऐसी अवधारणाएँ शामिल हैं जो एक वयस्क की पढ़ने–लिखने की समझ से भिन्न नज़र आती हैं। परन्तु यह भिन्नता केवल सतही तौर पर है। एक 3–4 साल के बच्चे की समझ और एक वयस्क की समझ का आधार एक ही है। बच्चे पढ़ने–लिखने की समझ अभी विकास के दौर से गुज़र रही है और धीरे–धीरे उस बिन्दु की ओर बढ़ रही है जो सर्वमान्य है। उस बिन्दु तक पहुँचने से पहले वह पढ़ने–लिखने की आधारभूत अवधारणाओं से रू–ब–रू होता है।

पढ़ने–लिखने के इस शुरूआती दौर को, जब औपचारिक रूप से बच्चे को पढ़ना–लिखना नहीं सिखाया जा रहा, एक खास दौर माना गया है। इस दौर में बच्चा पढ़ना–लिखने के बारे में जिन अवधारणाओं का सृजन करता है, उसे नवोन्मेषी साक्षरता (इमरजेंट लिटरेसी) का नाम दिया गया है।

ऐसे संदर्भों की सूची बनाएँ जिनमें मौखिक भाषा का विविध उद्देश्यों के लिए इस्तेमाल होता है। उदाहरण के लिए, अपने काम के संचालन के लिए, ध्यान दिलाने के लिए, खेलने के लिए वगैरह।

आप जान गए होंगे कि ऐसे संदर्भ अनगिनत है और उनकी सूची अनन्त। जब बच्चा कक्षा एक में पहली बार आता है तो वह मौखिक और लिखित भाषा का क्या ज्ञान रखता है?

मौखिक	लिखित
अपने अनुभवों को व्यक्त कर सकता है।	मौखिक और लिखित भाषा के सम्बन्ध को समझता है।

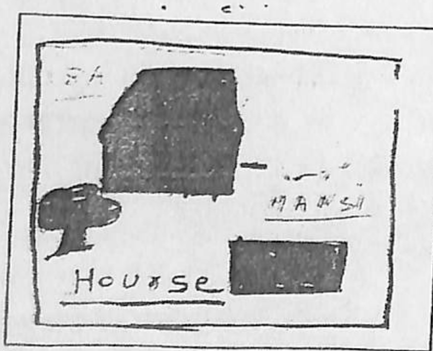
पठन सामग्री

चौथा दिन

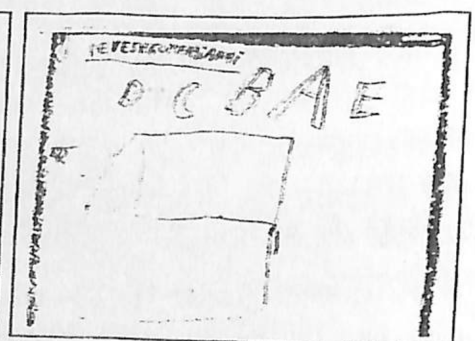
सत्र–4 : बच्चों का चित्र लेखन

सामान्यतः कक्षा 1 और 2 में पढ़ना–लिखना सिखाने के साथ–साथ चित्र बनाना भी सिखाया जाता है। अकसर हम पाते हैं कि ये चित्र इस प्रकार के होते हैं– झोंपड़ी, झण्डा, उगता हुआ सूरज, घास, फूल, नदी का एक दृश्य, गमला, फल, सब्जियाँ आदि।

कक्षा का एक दृश्यः



चित्र 1 मानसी



चित्र 2 देवेश

शिक्षक ने कक्षा 1 और 2 के बच्चों को कुछ चित्र बनाने का निर्देश दिया। बच्चे सीखा हुआ चित्र बनाने में जुट गए। ध्यान दीजिए, इस प्रक्रिया को शुरू करने से पहले बच्चों से न तो कोई बातचीत की गई और न ही उन्हें किसी संदर्भ से जोड़ा गया।

> **बालक को आकारों की भाषा अपने ही निराले ढ़ंग की होती है। वे आकार केवल आँखें से दिखने वाले आकारों से भिन्न होते हैं और उन आकारों का स्वरूप बालक की उम्र और उसके अनुभवों के साथ बदलता जाता है। अगर बालक को उम्र के हिसाब से अनुभव भी उपयुक्त ढंग से मिल रहे होंगे तो उसके ये आकार भी अपनी स्वाभाविक गति से विकसित हो रहे होंगे।**
> *शिक्षा का वाहन– कला, देवी प्रसाद*

आइए, इन चित्रों पर कुछ बातचीत करें, बच्चों ने शिक्षक द्वारा सिखाए गए तरीके से 'घर' का चित्र बनाया है। गौर करने की बात यह है कि यह एक सिखाया गया तरीका है और यह चित्र एक 'घर' का न होकर 'मकान' का है। घर के जीवन्त माहौल की छवि इस चित्र में नज़र नहीं आती। यह घर की चारदीवारी का चित्र है जिसे हम 'मकान' कह सकते हैं।

इस तरह से बनाए गए चित्रों के साथ बच्चों ने जुड़ाव महसूस नहीं किया। एक सीखे हुए तरीके से बनाए गए 'घर' के चित्र में बच्चे अपनी छवि नहीं देख पाए। हो सकता है जैसा 'घर' शिक्षक ने बनाया बच्चों ने

उस तरह का घर या फिर 'उगता हुआ सूरज' देखा ही न हो या उनकी एक अलग परिकल्पना उनके मन में हो।

कुछ समय बाद बच्चों को बाल साहित्य दिया गया और उसे पढ़कर अपनी पसन्द के चित्र बनाने को कहा गया। एक बच्चे द्वारा बनाया गया चित्र यहाँ दिया जा रहा है–

यह चित्र बच्चे की अपनी समझ और कल्पना से उभरा है और इस चित्र में बच्चे की रुचि तथा कहानी से जुड़ाव अभिव्यक्ति हुआ है।



बच्चों का चित्रांकन शुरुआती दौर के पढ़ने–लिखने के अनुभवों की एक महत्वपूर्ण कड़ी है। बच्चों की बोलने की प्रक्रिया में अपनी बात कहना और संकेत देना निहित होता है। चोर–सिपाही, टीचर–टीचर, रसोई और गुड़िया के खेल को यदि हम करीब से देखें तो पाएँगे कि बच्चे अपनी बातों की अभिव्यक्ति कितने सहज और सुन्दर ढंग से करते हैं। इसके साथ उनकी समझ, भाषा पर पकड़ और विचारों की नवीनता भी उजागर होती है। इन्हीं खेलों के साथ–साथ वे अपनी बात कहने के लिए चित्रों का सहारा लेने लगते हैं। यह प्रक्रिया धीरे–धीरे लिखित रूप में सामने आने लगती है। शब्दों में अपनी बात लिख लेने की स्थिति से पहले, चित्रों द्वारा अपनी बात को कहने का एक दौर शुरू होता है। यह दौर अस्थायी माना जाता है पर बच्चे इस दौर से गुज़रते ज़रूर हैं। लिखने के इस चरण को हम **चित्र–लेखन** का नाम देते हैं।

चित्रों में बच्चों की कोशिश होती है कि वे अपनी बातों को व्यक्तिगत रूप से अपने अन्दाज़ में कह सकें। ऐसा तब महसूस होता है जब वे अपने चित्रों को समझाते या उनके बारे में बात करते हैं।

बच्चे चित्रों के माध्यम से स्वयं अपनी बात कहकर आनंदित होते हैं। उन्हें अपनी बात को बोलने के अलावा एक और ढंग से कहने का अवसर मिलता है। परन्तु शिक्षक/अभिभावक बच्चों के चित्र–लेखन पर ज़्यादा गौर नहीं करते या फिर यह समझ नहीं पाते कि यह शुरुआती लेख से जुड़ा एक चरण है।

शुरुआती दौर का चित्र–लेखन, पढ़ना–लिखना सीखने का अहम हिस्सा होता है। शिक्षक और अभिभावकों को इसे समझना चाहिए और इसका आकलन भी करना चाहिए। यह आकलन कला के दायरे में ही नहीं बल्कि प्रारम्भिक शिक्षा से जोड़कर भी किया जाना चाहिए। शुरुआती दौर के चित्र बच्चों की समझ और रुचियों के बारे में बहुत कुछ कहते हैं–

शुरुआती दौर

- बच्चे अपने ढंग से चीज़ों को बनाते हैं और रंग भी अपनी ही पसन्द के भरते हैं। हम बगीचे के एक चित्र में घास का रंग पीला, लाल आदि भी देख सकते हैं।

- चित्रों का आकार लंबोतर, पतला और कम घेरे वाला हो सकता है।

- आरम्भ में कागज़ पर चित्रण उसके निचले हिस्से से शुरू न होकर कागज़ पर बीच में या काफ़ी ऊपर या कहीं भी दिखाई देगा। धीरे–धीरे इस अवस्था में चीज़ों के आकार और अनुपात के बारे में उनकी समझ बन रही होती है।

- किसी वस्तु का चित्रण केवल उसके बारी ढाँचे तक ही सीमित नहीं होता, बच्चे उस वस्तु की भीतरी विशेषताओं को भी उभारते हैं, जैसे– बाँसुरी के चित्र में बाँसुरी की ध्वनि को भी चित्रित करने की कोशिश होती है।

चित्रों में आ रहे बदलाव बच्चों के लेखन की प्रगति के सूचक होते हैं। कई बार ऐसा भी होता है कि बच्चों के चित्रों में कोई गति या बदलावनज़र नहीं आता और एक ठहराव की स्थिति बनी रहती है। ऐसे में धैर्य से काम लेना उचित होगा, क्योंकि बच्चे जल्दी ही इस पड़ाव को पारकर लेते हैं और उनके चित्र वास्तविकता के नज़दीक आने लगते हैं। जितना ज़्यादा वे अपने आस–पास की दुनिया के सम्पर्क में आते हैं उतना ही वे वास्तविकता को चित्रित करने लगते हैं। घास और फूलों आदि का रंग, वस्तुओं और चरित्रों का आकार वास्तविकता के करीब होता जाता है।

यदि हम कला–दृष्टि से बच्चों के चित्रांकन का आकलन करें तो यह भी पता चलता है कि इस अवस्था में बच्चों में सौंदर्यबोध का एहसास भी विकसित हो रहा होता है। तन्मयता से चित्र बनाते हुए बच्चों को कभी गौर से देखें। हर बच्चे के चित्र की अपनी एक शैली और एक अलग ढंग होता है। अपने चित्रों में बच्चे वह सब कुछ शमिल करते हैं जो–

- उनके आसपास होता है।
- लोग उनकी रोज़मर्रा की ज़िन्दगी से जुड़े होते हैं, जैसे–दोस्त, पास–पड़ोस, परिवार इत्यादि।
- पात्र सुनी या पढ़ी गई कहानियों से जुड़े होते हैं।

धीरे –धीरे चित्रों में कुछ कहने और ऐसी घटनाएँ जिनका उन पर गहरा प्रभाव पड़ा हो, जैसे–किसी लड़ाई–झगड़े की घटना, किसी बात पर नाराज़गी या यादगार यात्रा या अनुभवों के चित्र, को व्यक्त करने की उनमें प्रबल इच्छा नज़र आने लगती है।

आमतौर पर शुरुआती दौर में बच्चे अपनी बातों और अनुभवों को कहने के लिए मौखिक भाषा और चित्रों का इस्तेमाल करते हैं। किसी वस्तु को देखकर जो छवि उनके मन में बनती है उसे चित्रों के माध्यम से अभिव्यक्त करते हैं। भाषा का मौखिक प्रयोग करने और उस पर पकड़ बनाने का दौर बहुत पहले ही शुरू हो जाता है। उसमें आ रहे बदलाव और उसके विकास की गति पर तो शिक्षक अभिभावक थोड़ा–बहुत गौर करते हैं पर बच्चों द्वारा आड़ी–तिरछी लकीरें खींचने और चित्र–लेखन पर वे बिलकुल ध्यान नहीं देते।

चित्र–लेखन की अवस्था में कल्पनाशीलता का महत्वपूर्ण स्थान है। कक्षा में बच्चों को चित्र–लेखन में अपनी कल्पनाशीलता को सक्रिय रखने के मौके दिए जाने चाहिए।

बच्चों के चित्र–लेखन में जब उनकी कल्पनाशीलता सक्रिय होती है तब हम देखते हैं कि जहाज़ में चिड़िया के पंख लग जाते हैं और कभी–कभी बच्चों की मुलाकात परियों और भूतों से भी होने लगती है। उदाहरण के लिए, मनोज दास की अँग्रेजी में लिखी कहानी 'चेज़ींग द रेनबो' का पात्र जो कि पाँच–छह वर्ष का बच्चा है, जो गाँव में घूमता है, प्रकृति को करीब से देखता और सराहता है– रोज़ एक नई कहानी मन में बुनता है। उसे स्कूल जाना पसन्द नहीं है। उसे लगता है कि स्कूल की पढ़ाई जो वर्ण रटने तक सीमित है– उसकी मदद कैसे कर पाएगी, क्योंकि उसमें कोईरंग और रस तो है ही नहीं। उसे तो एक दिन इन्द्रधनुष पकड़ना है।

यह हमारी शुरूआती दौर की कक्षाओं का कटु सत्य है जहाँ पढ़ने–लिखने की सृजनात्मक गतिविधियों का अभाव है।

ज़रा सोचिए, क्या हम बच्चों की कल्पनाशीलता को बढ़ाने के लिए ऐसा करते हैं?

- क्या हम बच्चों को ऐसी कहानियाँ सुनाते हैं जो कल्पना को विस्तार देती हो?
- क्या बच्चों को कहानियों के आधार पर चित्र–लेखन के भी अवसर देते हैं?
- क्या बच्चों के लेखन का आकलन करते समय उनकी सृजनात्मकता को आँकते हैं?

दरअसल चित्र–लेखन बच्चों के अपने अनुभवों का प्रतिबिम्ब होता है। यह चित्र–लेखन उस स्थिति से बिलकुल अलग है जहाँ चित्र बनाना केवल निर्देशात्मक कार्य है। इसलिए यह ज़रूरी है कि हम बच्चों को घर और स्कूल में चित्र बनाने के अधिक से अधिक अवसर दें। ऐसा करने से हम बच्चों को अभिव्यक्ति के अवसर देने के साथ ही पढ़ने और लिखने की दिशा में आत्मनिर्भर बनाएँगे।

हम जानते हैं कि बच्चों को पढ़ने–लिखने की अपनी दुनिया बहुत सजीब और सकारात्मक होती है। अपनी बात को चित्रों के माध्यम से व्यक्त करने में भी सक्षम होते हैं और अपनी रुचि और ज़रूरत के अनुरूप चित्रों/प्रिंट को पढ़ना सीख लेते हैं। खाने की चीज़ों के लेबल, मनपसन्द चीज़ों के विज्ञापन आदि को पढ़ लेना उनके भाषा–प्रयोग का कार्यात्मक पक्ष है।

कक्षा 1 और 2 में बच्चों को चित्र बनाने के अवसर शिक्षक ही देते हैं। यह ज़रूरी है कि शिक्षक/अभिभावक बच्चों के चित्रों को समझें। लिखने की प्रक्रिया की शुरुआत आड़ी–तिरछी लकीरें और कागज़ पर कुछ बिन्दु बनाने में होती है। इस प्रक्रिया के दूसरे दौर में बच्चे चित्र बनाने की कोशिश करते हैं। हो सकता है कि पहले बच्चे चित्र बनाने में हिचकिचाएँ, क्योंकि बच्चों के लिए शायद यह एक नया अनुभव हो। इस हिचकिचाहट के कुछ अन्य कारण भी हो सकते हैं–

- बच्चों को किताबें देखने और पढ़ने के भरपूर मौके नहीं मिलते हों।
- अपने आसपास प्रिंट के नमूने देखने को कम मिले हों।
- कक्षा में स्वतंत्र रूप से पढ़ने और अभिव्यक्ति के बहुत कम अवसर मिलते हों और शिक्षक द्वारा बच्चों को प्रोत्साहन न मिलता हो ।

कक्षा 1 और 2 में बच्चों का चित्र–लेखन

बच्चा जो चित्र बनाता है या चित्रकार भी जो चित्र बनाता है. वह उसके अन्दर की अनुभूति द्वारा निर्मित होता है। दूसरों की आँखों देखा नहीं खुद देखा, खुद महसूस किया हुआ। बच्चा इस जगत को जैसे देखता है, जैसे उसे उसका अनुभव होता है और जिस तरह की प्रतिक्रियाएँ उसके अन्दर होती है, उन सबको लेकर उसके दिमाग़ में आकारों का निर्माण होता है। यह उस बाहरी जगत का ज्ञान होता है, जो आत्म–प्रकटन वह चित्रकला द्वारा करता है। वह इन आकारों द्वारा प्रकाश पाता है। यह आकार ही उसकी चित्र भाषा की बारहखड़ी होती है। इसीलिए जो चित्र वह अपनी भाषा द्वारा बनाते हैं वह भाषा के मापदण्ड के हिसाब से ठीक होते हैं। चित्र अच्छा बना या गलत, यह कहने का अधिकार उसी व्यक्ति को है, जो बच्चे की इस चित्र–भाषा से परिचित है। एक भाषा वाला व्यक्ति अगर दूसरी भाषा के वाक्य की रचना की परख अपनी भाषा के व्याकरण से करे और कहे कि वाक्य–रचना गलत है ता अन्याय करेगा। बच्चे की आकार की भाषा बनती है, उसके पूर्ण व्यक्तित्व के अनुभव द्वारा। और सयाने के आकार की भाषा अकसर केवल आँख के अनुभव से बनती है। ये दोनों निराली हैं। इनकी एक–दूसरे के साथ तुलना नहीं की जा सकती।

शिक्षा का वाहन– कला देवी प्रसाद

अकसर बच्चे अपने बनाए हुए चित्रों से सन्तुष्ट नहीं होते। बच्चों को अच्छे चित्रण के नमूने दिखाने चाहिए ताकि अपने चित्रों में बदलाव लाने के लिए वे प्रोत्साहित हों। हम यह मानते हैं कि बच्चों के चित्रों को कक्षा में एक सम्मानजनक स्थान मिलना चाहिए। परन्तु शिक्षक/वयस्कों को बच्चों को केवल 'शाबासी' देकर ही तसल्ली नहीं कर लेनी चाहिए। चित्रों में आ रहे बदलावों और लिखत के साथ चित्रों के जुड़ाव को समझना और आकलन डायरी में नोट करना चाहिए। बच्चों को अपने चित्रों पर बातचीत के अवसर मिलने चाहिए। बातचीत कि दौरान उनकी कही गई मुख्य बातों को लिखना भी प्रारम्भिक साक्षरता की एक महत्वपूर्ण गतिविधि है। कक्षा में 'पढ़ने का कोना' होने के साथ–साथ 'बच्चों का चित्र कोना' होना चाहिए।

हमें चित्रों और चित्रांकन को लेकर कक्षा 1 और 2 में क्या करना चाहिए?

कक्षा 1 और 2 में संदर्भ से जोड़कर गतिविधियाँ करवाना बहुत महत्वपूर्ण है। ऐसा करने से बच्चे–

- सुनी/पढ़ी गई कहानी, घटना आदि की समझ बनाते हैं।
- कल्पना करने के लिए प्रेरित होते हैं।
- चित्र–लेखन जैसा सृजनात्मक कार्य कर पाते हैं।

बच्चों का चित्रण उनकी चीज़ों को परखने की क्षमता पर आधारित होता है। इसके लिए बच्चों का उन चीज़ों और किरदारां से सम्पर्क हो जिन्हें वे देख और समझ सकते हैं। कहानियों,कविताओं और बातचीत के माध्यम से भाषा से उनका रू–ब–रू होना अति आवश्यक है।

- एक ही शैली और तरीके से चित्र ना बनवाएँ। यदि हम फूल, गमला आदि के चित्र बनवाना चाहते हैं तो कक्षा में फूलों और गमलों के कई विभिन्न चित्र लगाएँ/दिखाएँ।

- हमारा बनाया हुआ चित्र हमारे लिए है, बच्चों पर उसे थोपने की कोशिश न करें।
- कक्षा में बच्चों के अनुभवों से जुड़े, संदर्भ सहित चित्रांकन ज़्यादा करवाने का प्रयास करें।
- धीरे–धीरे कुछ काल्पनिक घटनाओं/कहानियों पर भी चित्र बनाने की कोशिश करें।
- कविताओं पर भी चित्र बनवाए जा सकते हैं। इसके लिए ज़रूरी है–

कविता लिखत में बच्चों के पास हो या उनके आसपास दीवार आदि पर लगी हो, क्योंकि कविता से चित्र तभी उभरेंगे जब वे उसे पढ़ेंगे। बच्चों को समझाकर पढ़ने का मौका देने की यह एक महत्वपूर्ण गतिविधि है।

बच्चों का चित्र–लेखन बच्चों की लिखने की प्रक्रिया का एक हिस्सा है। चित्र–लेखन के दौर में भी बच्चें अर्थ निर्मित करने की प्रक्रिया से ही गुज़रते हैं। अर्थ बच्चों के सुने, पढ़े, देखे गए अनुभवों पर आधारित होते हैं। लिखने की क्रिया में भी बच्चों द्वारा अर्थ निर्मित करने का दर्शन समाहित है।

पठन सामग्री

पाँचवा दिन

सत्र–1 : कक्षा एक और दो में लेखन – एक दृष्टिकोण

अपने आसपास कक्षा 1 और 2 के बच्चों को पढ़ना लिखना सीखने के नाम पर अक्षर, उनकी ध्वनि, बनावट और उनसे शुरू होने वाले एक–एक शब्द को अच्छी तरह से रटते देखने का अनुभव शायद किसी भी पाठक के लिए नया नहीं होगा। दूसरी तरफ इन्हीं बच्चों को अपने खेलों में अलंग–अलग खेल गीतों का इस्तेमाल करना, शब्दों के साथ खेलना, तुकबंदी करना, खेल–खेल में किसी का अभिनय करते हुए उस व्यक्ति जैसी बातचीत करना, और तो और अकेले खेलते समय अपनी क्रियाओं के बारे में सोचते हुए साथ–साथ बोलना आदि भी कुछ ऐसे अनुभव हैं जो अपने आप में काफ़ी मायने रखते हैं। हम जानते हैं और मानते भी हैं कि बच्चे सही और प्रभावी रूप से बात करने, सोचने, खेलने के लिए भाषा का इस्तोल करते हैं। फिर, ऐसा क्यों होता है कि बच्चों के ये व्यवहार, जो भाषा पर उनकी पकड़ के साथ–साथ भाषा के बारे में उनकी जानकारी और समझ को दर्शाते हैं– कक्षा की दहलीज़ के बाहर रह जाते हैं, क्यों बच्चों की भाषा सम्बन्धी ये उपलब्धियाँ शुरुआत में बताए गए अक्षर सीखने के शोर में कहीं खो जाती है? इन सवालों के जवाब के लिए हमें सबसे पहले यह समझने की ज़रूरत है कि बच्चे भाषा–प्रयोग की जिस समझ के साथ स्कूल में आते हैं, उसका पढ़ने–लिखने के साथ गहरा सम्बन्ध है।

क्या है पढ़ना और लिखना?

अक्षर और उसकी ध्वनि का आपसी सम्बन्ध सीखना ही आमतौर पर पढ़ना–लिखना सीखने की शुरुआत समझा जाता है। यह समझ कक्षा में अक्षर, शब्द, वाक्य और फिर शायद कहानी या कविता पढ़–लिख पाने के क्रम में नज़र आती है। अब ज़रा गौर करते है कि बात करना सीखना या बच्चें द्वारा मौखिक भाषा का उपयोग करना भी क्या ऐसी क्रमबद्ध और औपचारिक शिक्षा के मोहताज़ हैं? बच्चे रोज़मर्रा की विभिन्न स्थितियों में बड़ों को एक–दूसरे से बात करते हुए सुनते हैं। धीरे–धीरे बच्चे खुद अपने विचार दूसरों तक पहुँचाने के लिए मिलती–जुलती संरचनाओं का इस्तेमाल करने लगते हैं और बड़ों की प्रतिक्रिया के अनुसार उन्हें बदलते चलते हैं। वह कौशल बातचीत के स्वाभाविक और अर्थपूर्ण संदर्भ में विकसित होता है।

इसी उम्र में बच्चे अपने आसपास की लिखित सामग्री, जैसे कि बिस्कुट और टॉफी की पन्नी, सड़क पर लगे निर्देश बोर्ड और पोस्टरों आदि को पढ़ने की कोशिश करते हैं। हाथ में कलम, पेन्सिल या स्लेट आते ही आड़ी–तिरछी लकीरें खींचकर उनके साथ कोई अर्थ या संदेश जोड़ने की कोशिश करते हैं– यह भी लिखने की शुरुआत का हिस्सा है। ये उनकी प्रारम्भिक साक्षरता के संकेतक हैं, अर्थ गढ़ने के सहज प्रयास के ही रूप में– किसी औपचारिक शिक्षा का परिणाम नहीं। असल में रोज़मर्रा के अर्थपूर्ण और कार्यात्मक संदर्भों में मौखिक भाषा के विकास की ही तरह पढ़ने–लिखने की समझ भी विकसित होती है।

कक्षा में लेखन का स्वरूप

अब विचारणीय यह है कि प्रारम्भिक साक्षरता को इस अवधारणा को और अधिक विस्तार एवं गहनता से समझना और कक्षा में स्थान देना क्यों आवश्यक है और बच्चों का सीखना एक सार्थक कार्य कैसे बने? स्कूल में आए बच्चे पहले से ही बोलचाल की भाषा के ज्ञान और पढ़ने–लिखने की कुछ महत्वपूर्ण अवधारणाओं से लैस होते हैं। यदि सिखाने की प्रक्रिया बच्चों की इस क्षमता को ज़रूरी आधार मानकर स्वाभाविक तरीके से आगे बढ़ाई जाएगी तो पढ़ना–लिखना सीखना एक रुचिकर और अर्थपूर्ण अनुभव हो जाएगा।

बच्चों के चित्रों की टेढ़ी–मेढ़ी लकीरें भी बहुत कुछ कहती है। चित्र बनाने का अक्सर उन्हें अपने अनुभव तथा अपने विचार प्रस्तुत करने के लिए प्रोत्साहित करता है। लिखने के इस चरण में ऐसे निजी अर्थ को सर्वमान्य या साँझे रूप से समझने के लिए यदि शिक्षक बच्चे के द्वारा उसके चित्र के बारे में बताए गए नाम या संदेश को ज्यों का त्यों लिख दे तो लिखने के कार्यात्मक प्रयोग से बच्चा उसी पल अवगत होने लगता है। लिखत/प्रिंट का प्रयोग कुछ अर्थपूर्ण कहने के लिए हुआ है, ऐसे ही कार्यों से साक्षरता की अवधारणा स्पष्ट होती जाती है। साथ–ही–साथ लिखने के तकनीकी पहलू सामने आने लगते हैं, जैसे–लिखने की

दिशा बाएँ से दाएँ (हिन्दी में) या दाएँ से बाएँ (उर्दू में), संकेतों की आकृति, दो शब्दों के बीच की खाली जगह, देवनागरी लिपि में शब्द के ऊपर लकीर खींचना आदि।

इन अवधारणाओं की समझ बच्चों के स्वयँ 'लिखने' के प्रयास में धीरे–धीरे नज़र आने लगती है, ज़रूरत है तो सिर्फ़ सही अवलोकन की।

लेखन के इसी परिप्रेक्ष्य में पठन–लेखन के गहरे सम्बन्ध को समझना होगा। दरअसल, अर्थपूर्ण गतिविधियों के माध्यम से पढते समय समझने और सोचने के लिए बच्चों को प्रोत्साहित करना ज़रूरी है अन्यथा अक्षरों की आवाज़ को मिलाकर बोल पाना ही 'पढ़ना' मान लिया जाएगा। लिखने की तरह पढ़ने की प्रक्रिया में भी अर्थ समझने की प्राथमिकता को स्वीकार करते हुए बच्चे धीरे–धीरे पढ़ पाने के कौशल की बारीकियों को समझने लगते हैं, जैसे पढ़ने की दिशा, संदर्भ से पठन सामग्री का अनुमान लगाना आदि। इस संदर्भ में ध्वनि–अक्षर के सम्बन्धों की समझ भी बनने लगती है।

दो शिक्षकों के बीच संवाद

अब आप ही देखिए दीक्षित जी, दूसरी कक्षा में आ गए हैं, तब भी इन बच्चों का यह हाल है। मैंने अभी श्रुतलेख बोली है। अब जाँच कर रहा हूँ। एक बच्चे ने भी दस में से दस शब्द सही–सही नहीं लिखे। इसी बच्चे को देख लो, केवल दो शब्द सही हैं।

बच्चों की गलती ठीक कराने से ज़्यादा ज़रूरी है यह समझना कि वे गलतियाँ कर भी रहे हैं या नहीं? इसी बच्चे के लिखे दस शब्दों पर गौर कीजिए। इस बच्चे ने बोड़ी, गोरकर और मजबोर तीनों शब्दों में ' ू ' के बजाय ' ो ' का इस्तेमाल किया है। परन्तु सोचकर में उसने ' ो ' मात्रा का सही इस्तेमाल किया है। इसका मतलब उसे ' ू ' और ' ो ' ध्वनि का अन्तर पता है पर ' ू ' ध्वनि के चिह्न में उलझन है। आगे देखिए परेसानी में 'स' का प्रयोग दर्शाता है कि 'स' ओर 'श' के उच्चारण या लेखन में इस बच्चे को उलझन है। घूरकर को इसने 'गोरकर' लिखा है। इसका मतलब या तो यह शब्द इसे ठीक से सुनाई नहीं दिया या फिर 'ग' और 'घ' में इसे अन्तर करने में दिक्कत है। चिल्लाई शब्द को इसने 'चीलआई' लिखा है। स्पष्ट है कि बच्चे ने अपने ही तरीके से आपके द्वारा दी गई ज़िम्मेदारी को निभाने का प्रयोग किया है।

अक्षर ध्वनि सम्बन्ध

दो शिक्षकों के बीच जिस मुद्दे पर संवाद हो रहा है यह वास्तव में कई शिक्षकों के मन में आता है। परन्तु गौरतलब बात यह है कि लिखत (प्रिंट) के साथ जुड़ने के लगातार मौकों से बच्चों में लिखत की अवधारणा के साथ अक्षर–ध्वनि सम्बन्धों की समझ भी बनती चली जाती है। हाँ, यह सम्भव है कि कुछ अक्षरों को

ध्वनियों की पहचान बच्चों को कभी–कभी किसी दूसरे द्वारा ध्यान दिलाने से ही स्पष्ट होती है। बार–बार प्रयोग में आने वाले अक्षरों के ध्वनि संकेतों को पहचान बच्चों को स्वतः ही हो जाती है। जैसा कि चित्र–1 में भी आप देख सकते है कि बच्चे को ' ॢ ' और ' ो ' के ध्वनि संकेतों में उलझन है। पर साथ ही उसे यह ज्ञान भी है ' ॢ ' और ' ो ' मिलती–जुलती आवाज़ों के चिन्ह हैं, इसलिए आवश्यकता के अनुसार शिक्षक अक्षर–ध्वनि संकेत पर भी ध्यान आकर्षित कर सकते हैं। यह बिलकुल ज़रूरी नहीं कि उन्हें ऐसा दोहराव हमेशा करना पड़े। किसी कहानी या संदर्भ में यदि किसी खास अक्ष/वर्ण की पुनरावृत्ति हो रही है तो कक्षा में सभी बच्चों के साथ इस सम्भावना पर भी ध्यान दिया जा सकता है। उदाहरण के लिए 'हाथी की हिचकी' कहानी में 'ह' की पुनरावृत्ति इसके लिए उपयुक्त हो सकती है। पर शुरुआती स्तर पर मात्राओं पर अलग से बल देने की ज़रूरत नहीं है। किसी खास वर्ण की तुलना में मात्राओं का इस्तेमाल बच्चे हर शब्द में देख सकते हैं। इस तरह खुद ही उनकी मात्राओं के इस्तेमाल की कुछ समझ बन जाती है। कक्षा एक और दो में हमारा ध्यान बच्चों को शुद्ध बर्तनी सिखाने पर नहीं बल्कि इस बात पर होना चाहिए कि बच्चे अपने मन की बात **स्ववर्तनी** में भी बेझिझक व्यक्त करते हैं। नीचे दिए गए उदाहरण से हमें यह पता लगेगा कि बच्चों में अक्षर ध्वनि सम्बन्ध बनाने में शिक्षक और लिखत/प्रिंट समृद्ध वातावरण की क्या भूमिका होती है–

आज की कार्य योजना के तहत मैंने सोचा कि आज रीना पर खास ध्यान दूँगी। जब सभी बच्चे रीडिंग कॉर्नर से किताबें पढ़ रहे थे, मैंने रीना से कहा कि अपनी पसन्द की कहानी की किताब लाए। वह लालू और पीलू की किताब लाई। हम दोनों ने मिलकर चित्रों की मदद से कहानी पढ़नी शुरू की। रीना ने चित्रों में दिख रहे पात्रों को नाम देना शुरू किया और मैं चित्रों में हो रही घटनाओं का विवरण दे रही थी। उसके विवरण देने के बाद में पृष्ठ पर लिखी लाइन को ऊँगली रखकर उसके लिए पढ़ देती। इस तरह हमने पूरी किताब पढ़ ली। फिर मैंने रीना से कहा कि अब वह स्वयं उस कहानी को पढ़े। वह किताब लेकर अपनी जगह पर बैठ गई और अपनी सहेली के साथ किताब पढ़नी शुरू कर दी। थोड़ी ही देर में वह किताब लेकर मेरे पास आई और कहा 'अब मैं पढ़ सकती हूँ।' मुझे उसका आत्मविश्वास देखकर खुशी हुई। मैंने कहा, "चलो पढ़ते हैं।" उसने पहले पृष्ठ पर चित्रों से ही कहानी पढ़ी। फिर वह नीचे लिखे वाक्यों को पढ़ने की कोशिश करने लगी उसने लिखत से लालू और मुर्गी पहचान लिया। दूसरे पृष्ठ पर मैंने उसका ध्यान पीलू की और दिलाया फिर यह तीन शब्द वह हर पृष्ठ पर पहचानती गई। (शिक्षक को अनुभव डायरी पर आधारित एक घटना)

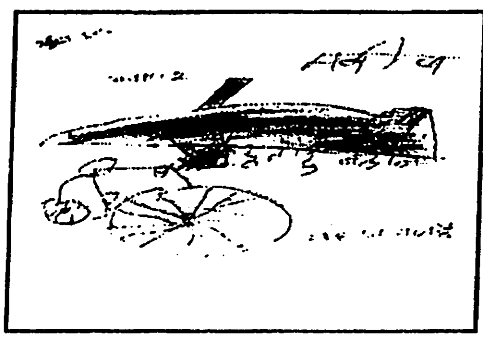
अक्षर–ध्वनि सम्बन्ध की समझ बच्चों के लेखन में लगातार झलकती है। शिक्षक अब एक और महत्वपूर्ण अवधारणा बच्चे के लेखन में देख सकते हैं और लिखने की प्रक्रिया ऐसे सार्थक अवसरों में परिपक्व होती

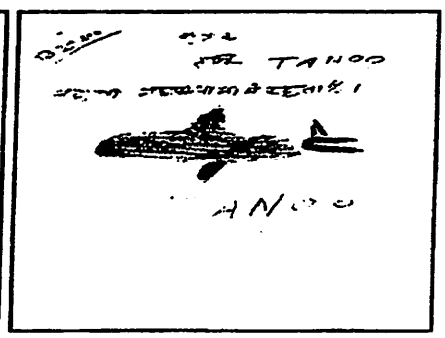
हुई धीरे–धीरे पारम्परिक लेखन को और बढ़ती जाती है। बच्चे अपनी बात लिखने के प्रयास में अक्षर–ध्वनि सम्बन्धों की समझ का इस्तेमाल करते हुए वर्तनी की खोज भी करने लगते हैं।

स्ववर्तनी लेखन के कुछ नमूनों में प्रयास प्रोत्साहन योग्य है; बच्चों की अपनी दिली– बात लिखकर बताने की ललक इनमें साफ़ झलकती है। परन्तु अकसर शिक्षकों को वर्तनी की ये 'त्रुटियाँ' स्थायी लगती है और इस कारण इन्हें अन्य 'त्रुटियों' की तरह डाँट–डपटकर सुधारने की कोशिश की जाती है।

बोलना सीखने की प्रक्रिया में भी बच्चों की जुबान जब जाने–माने शब्दों से मिलते–जुलते शब्द बनाती है तो क्या हम उसे प्रोत्साहित नहीं करते? तो फिर लिखना सीखने की स्वाभाविक प्रक्रिया में स्ववर्तनी की खोज के ये उदाहरण चिंताजनक क्यों? **अर्थपूर्ण संदर्भ में लिखित सामग्री से बढ़ते सम्पर्क स्ववर्तनी को भी पारम्परिक लेखन की ओर ले जाते हैं इसलिए लिखने के साथ–साथ पढ़ने के अवसर बनाए रखना भी अत्यंत आवश्यक है। साथ ही पढ़ने–लिखने की समझ को एक स्वाभाविक, विकासात्मक नज़रिए से बढ़ावा देना ज़रूरी है।**

पढ़ने–लिखने का सम्बन्ध





कक्षा में लेखन के परिप्रेक्ष्य में एक बार फिर पढ़ने–लिखने का सम्बन्ध समझना अनिवार्य है। जैसे कि पहले बात की गई है, ये दोनों प्रक्रियाएँ एक–दूसरे की पूरक हैं। पठन में सीखी गई अवधारणाएँ और कौशल लेखन में काम आते हैं और लेखन की पठन में। अतः बच्चों के लिखित संदेशों को उन्हीं के द्वारा पढ़ाया ज़रूर जाना चाहिए तथा पढ़ी हुई सामग्री से सम्बन्धित लेखन का कार्य देना चाहिए। इससे पढ़ी हुई सामग्री की समझ बच्चों को अपने निजी अनुभवों की अभिव्यक्ति में सहायता करेगी। यह प्रक्रिया लेखन को अर्थपूर्ण संदर्भों में प्रयोग करने के लिए प्रेरित करेगी। कुछ लेखकों का यह भी मानना है कि पढ़ने से उनके निजी अनुभवों का विस्तार होता है और नए अनुभव, अनुभव कोश में जुड़ जाते हैं जिसकी झलक लेखन में देखी जा सकती है। लेखन के दौरान एक लेखक अपने विचारों के साथ जूझते हुए उन्हें कागज़ पर उतारने की

कोशिश करता है। यह प्रक्रिया पढ़ने–लिखने के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध बनाने में और इन्हें गहराई से समझने में सहायक होती है। एक स्थायी पाठक और अच्छा लेखक बनाने में यही कौशल महत्वपूर्ण है।

कक्षा में लेखन के मौके

प्रायः कक्षाओं में लेखन की समझ पठन की तरह ही वर्णमाला की शुरूआत पर निर्भर मानी जाती है। इसके पीछे धारणा यह है कि लिखित कार्य तो वर्णमाला सीख लेने पर ही सम्भव है। वर्णमाला के ज्ञान के बाद भी बच्चे अपने विचारों, अपने अनुभवों को अभिव्यक्त नहीं कर पाते। आमतौर पर कक्षा में बच्चों के विचारों और विषयवस्तु से अधिक तकनीकी पहलू, जैसे–वर्तनी; लिखावट आदि पर ध्यान दिया जाता है। इसके परिणामस्वरूप कक्षा में लेखन कार्य वर्णमाला को सुन्दर लिखावट, सुलेख, प्रश्न–उत्तरों को देखना लिखाना, श्रुतलेख आदि तक ही सीमित होता है। ऐसे अभ्यास बच्चों की लिखने की स्वाभाविक इच्छा पर रोक लगा देते हैं और अपनी बातें लिखने की उत्सुकता कहीं खो जाती है। लिखना सीखने–सिखाने का यह तरीका बच्चों की सक्रिय खोज और लेखन के उद्देश्य, 'अभिव्यक्ति' के विरूद्ध जाता है। कक्षा में लेखन कार्य इस प्रकार का हो जो स्वाभाविक और विकासात्मक दृष्टि से बच्चे को एक सक्रिय लेखक बनने के अवसर देता हो। लेखन को संप्रेषण का, अपनी बात कहने, कल्पना करने, जानकारी देने, सूचित करने, पता लगाने, खोज करने, भावों को व्यक्त करने का सशक्त माध्यम समझना चाहिए। किसी भी आयु या स्तर पर लेखन–कार्य ऐसा हो जो बच्चों को लेखन के इस कार्यात्मक प्रयोग से सम्बन्ध बनाने का अवसर दे। नीचे दिए कुछ बिन्दु ऐसी गतिविधियों का निर्माण करने में सहायक हैं–

1. **बाल–साहित्य और लेखन–** लिखने के विषय और लिखकर कुछ कहने के अवसर प्रायः शिक्षक द्वारा सुनाई गई कहानी से जुड़े होने चाहिए। बच्चों की लिखने की समझ ओर कौशल के अनुसार शिक्षक कहानी के किसी अंश से मिलता–जुलता अनुभव बच्चों को चित्र द्वारा अभिव्यक्त करने के लिए कह सकते हैं। इस चित्र पर शिक्षक बच्चे के अनुभव को उसी के शब्दों में लिख सकते हैं अथवा थोड़े बड़े बच्चे वह बात खुद लिखने का प्रयास कर सकते हैं। इस प्रयास में भी शायद कोई बच्चा केवल कुछ वस्तुओं और व्यक्तियों के नाम लिखे या स्ववर्तनी में पूरा वाक्य। शिक्षक के लिए यह आवश्यक है कि वह इन साक्ष्यों को रिकॉर्ड कर उनका आकलन करे और प्रत्येक बच्चे के मौजूदा कौशल को समझकर उसे आगे लेकर जाने के उचित अवसर प्रदान करे।

   कहानी के पात्रों को नाम देना, कहानी का नया शीर्षक लिखना और कहानी को आगे बढ़ाना आदि लेखन के अन्य अवसर हैं। कविताओं में तुकबन्दी वाले शब्द बच्चों का ध्यान आकर्षित करते हैं तथा इसी रुचि को महत्व देते हुए बच्चे आगे बढ़ाई गई कविता की पंक्तियों में ऐसे शब्द खुद देख सकते हैं अथवा कविता की समझ के आधार पर स्वयं पंक्तियाँ जोड़ सकते हैं।

2. **अनुभव आधारित लेखन** – बच्चों के राज़मर्रा की कक्षा और कक्षा के बाहर के अनुभव भी लिखने के महत्वपूर्ण अवसर हैं। रोज़ाना कक्षा का कुछ निर्धारित समझ पिछले दिन का अनुभव बाँटने और उन अनुभवों को लिखने के लिए दिया जा सकता है।
3. **पाठ्यपुस्तक का प्रयोग**– शिक्षक लेखन के अवसरों के लिए पाठ्यपुस्तक में दी गई कहानियों और कविता भी उपयोग में ला सकते हैं। ध्यानपूर्वक बनाई गई योजना कक्षा में मौजूद अन्य बाल साहित्य से इन पाठों का सम्बन्ध बना सकती है और बच्चे अब एक ही विषय से सम्बन्धित सामग्री का आनन्द ले सकते हैं। पाठ्यपुस्तक सम्बन्धित लिखने की गतिविधियाँ भी पारम्परिक प्रश्नोत्तर, रिक्त स्थान भरो आदि के बजाय रुचिकर और अर्थपूर्ण बनाई जाएँ तो लेखन जल्दी ही अभिव्यक्ति का एक मज़ेदार माध्यम बन जाएगा।
4. **लिखत/प्रिंट समृद्ध कक्षा का लेखन में सहयोग**– बच्चों द्वारा लिखे गए नाम, शीर्षक, अनुभव, कहानियाँ आदि कक्षा में प्रदर्शित करने से भी लेखन को प्रोत्साहन मिलता है। कक्षा में स्थान प्राप्त करने से ज़्यादा अपने लेखन के लिए एक प्रामाणिक पाठक और कारण का होना लेखन कार्य को और सार्थक बनाता है। शिक्षक द्वारा लिखी गई 'आज की बात' (मार्निंग मैसेज) धीरे–धीरे बच्चों द्वारा भी शिक्षक या एक दूसरे के लिए संदेश लिखने के रूप में नज़र आती है। इसी प्रकार पुस्तक सूची में हर सप्ताह पढ़ी गई कहानी और कविताओं का नाम लिखना भी लेखन का अर्थपूर्ण तरीके से एक प्रयोग है।

लेखन को अपने विचार, कल्पनाओं और अनुभवों की अभिव्यक्ति के लिए कए माध्यम समझा जाना आवश्यक है। यह दृष्टिकोण प्रारम्भिक साक्षरता की नीवं है और पढ़ने–लिखने का यह नज़रिया ही अर्थपूर्ण अधिगम के लिए महत्वपूर्ण है।

पठन सामग्री

पढ़ने में अनुमानों की भूमिका

आज पठन से संबंधित बहुत से अध्ययनों में इस बात पर ध्यान दिया जा रहा है कि जिस सामग्री को पढ़ना है उसके बारे में पूर्वज्ञान का पाठकों को उपयोग करना होता है। औपचारिक मनोविज्ञान की भाषा में इसे परिकल्पना–जाँच कहते हैं शिक्षक इसे अटकल लगाना कहते हैं और मैं इसे पूर्वानुमान कहता हूँ। बिना पूर्वानुमान के पढ़ना असम्भव है। बच्चे पढ़कर ही पढ़ना सीखते है और इसका मतलब है कि पूर्वानुमान का हुनर विकसित करना और इस्तेमाल करना, पढ़ना, सीखने का एक महत्वपूर्ण अंग होना चाहिये ।

यह कोई जरुरी नहीं है कि पूर्वानुमान सिखाया जाए क्योंकि यह (पूर्वानुमान) तो जवाबी भाषा समझने में भी उतना ही महत्वपूर्ण हिस्सा है जितना पढ़ने में। जिन बच्चों में इतनी शाब्दिक क्षमता है कि वे लिखित सामग्री पढ़कर सुनाई जाने पर समझ ले तो उनमें यह क्षमता और अनुभव है कि वे पूर्वानुमान के अपने हुनर को पठन में प्रयुक्त कर सकें। यहाँ मेरा उद्देश्य यह दिखाना है पढ़ने के लिये पूर्वानुमान अनिवार्य है, कि जो भी बोली भाषा समझ लेता है उसमें पूर्वानुमान की क्षमता है और कि शुरुआती और धाराप्रवाह दोनों प्रकार के पाठक पूर्वानुमान का आमतौर पर उपयोग करते हैं।

पूर्वानुमान के चार कारण

1. अकेले शब्द के कई अर्थ होते हैं। आम शब्दों के कई–कई अर्थ होते हैं रोजमर्रा के शब्दों के न सिर्फ कई अर्थ होते है बल्कि उनके व्याकरणीय उपयोग को लेकरं भी भ्रम रहता है। ध्यान देने की बात तो यह है कि बोलने वाले और लेखकों को इस संभावित बहु अर्थ का पता नहीं रहता और पाठक औरं श्रोता भी कभी कभार ही इस बात के प्रति सचेत होते हैं।
2. यह बिन्दु हिन्दी पर लागू नही होता। यह अंग्रेजी हिज्जों और उच्चारण से संबंधित है।
3. पढ़ने के दौरान दिमाग कितनी "दृश्य जानकारी ' को पचा सकता है, इसकी एक सीमा है। करीब तीस अक्षर सेकेण्ड के दसवें भाग के लिये पर्दे पर दिखाईये। एक अनुभवी पाठक भी अधिक से अधिक चार–पांच पहचान पाएगा। इसका अर्थ है कि यदि कोई व्यक्ति एक के बाद एक अक्षर पहचानने की कोशिश करें तो पढ़ना बहुत ही धीमी और सीमित प्रक्रिया रह जाएगी।
4. छोटी–अवधि की याददाशत (या "कामकाजी याद्दाश्त") बहुत सीमति होती है। एक समय पर छः या सात असंबंध चीजों से ज्यादा को इस कामकाजी याद्दाश्त में नही रखा जा सकता। पहले से भरी हुई छोटी अवधि याद्दाश्त में और कुछ डालने की कोशिश करेंगे तो एक अन्य कोई जानकारी खो जाएगी। इसके परिणामस्वरुप, एक समय में चार–पांच अक्षरों से ज्यादा लम्बे शब्द को पढ़ना लगभग असंभव है। जब तक शब्द के अन्त तक पहुँचने आरम्भ भूल चुके होंगे। इसी तरह से वाक्य के अंत तक पहुँचने तक, पहले शब्दों को संजोकर रखना असंभव है। जब तक वाक्य का अंत आएगा, आरम्भ भूल चुका होगा।

अनुमान को परिभाषित करना

ऊपर बनाए चारों कारणों के पीछे कोई अन्य सामान्य बात नहीं है। हर मामले में दिमाग के सामने अपनी क्षमता से ज्यादा विकल्प होते है और उसे इनमें से चुनना होता है। निर्णय लेने में समय लगता है और चाहे शब्द पहचान की बात हो या अक्षरों की, यह कोई वाक्य या पूरी किताब समझने की निर्णय लेने के हर

पहलू पर एक बुनियादी नियम लागू होता है। वह नियम है विकल्पों की संख्या बढने पर दिमाग को निर्णय में लगा समय भी बढ़ता है। पहचान तत्काल नहीं की जा सकती। यदि कोई अक्षर या शब्द किसी छोटे से ज्ञात समूह में से आता है जैसे स्वर, व्यंजन या किसी फूल का नाम, वगैरह तो हम उसे पहचान पाएंगे। परन्तु वही शब्द या अक्षर यदि बहुत सारे विकल्पों के समूह में आए तो पहचान पाना मुश्किल हो जाएगा। इस दिक्कत का सरल– सा कारण है विकल्पों की संख्या बढ़ने पर दिमाग को निर्णय लेने के लिये ज्यादा जानकारी पचानी पड़ती है। धाराप्रवाह पठन का मूल यंही है कि दिमाग द्वारा प्रोसेस की जाने वाली जानकारी में कुशलतापूर्वक कमी की जाए। यदि आपको पहले से मालूम है कि अक्षर या तो क होगा य ख तो सिर्फ एक झलक सही अक्षर बनाने के लिये काफी होगा परंतु यदि अक्षर पूरी बारहखड़ी में से कोई एक होने वाला है तो कही ज्यादा दृश्य जानकारी का उपयोग करना होगा।

पुर्वानुमान की मेरी सामान्य परिभाषा इस प्रकार है: असंभाव्य विकल्पों को पहले ही निकाल देना। जानकारी के सिद्धांतो की भाषा में पूर्वानुमान का अर्थ अनिश्चितता कम करना है। मेरी परिभाषा में असंभाव्य शब्द की थोड़ी व्याख्या जरुरी है। मैं जिस अर्थ में पूर्वानुमान शब्द का उपयोग कर रहा हूँ उसका मतलब अंदाजबाजी नहीं है। पूर्वानुमान का अर्थ है कि असंभाव्य विकल्पों को अलग करे पहले उन विकल्पों पर विचार करना जो ज्यादा संभाव्य है। ऐसी प्रक्रिया भाषा संबंधी निर्णयों के लिये बहुत कारगर है।

व्यवहार में पूर्वानुमान

कल्पना कीजिए कि मैंने एक–एक कार्ड पर एक अक्षर लिखा है और मैं उन्हें पीस देता हूं। अब मैं कोई भी एक कार्ड उठाकर आपसे अनुमान लगाने को कहता हूं कि कौन सा अक्षर होगा। आपकी आपत्ति उचित ही होगी कि किसी भी अक्षर के आने संभाविता बराबर है ओर आपके पूर्वज्ञान से अनुमान में कोई मदद नहीं मिलेगी।

स्कूल में बच्चे की भाषा का मूल्यांकन उसके बालेने या लिखने पर आधारित होता है। बच्चे से यह अपेक्षा करना उचित नही है कि वे शब्दों को अर्थ समझाने की पहली सीढ़ी समझें क्योंकि हों सकता है वे इस अर्थ के लिये उन शब्दों का इस्तेमाल ही न करते हों।

परन्तु दरअसल भाषा में अक्षर बेतरतीबी से नहीं प्रयुक्त होते। कुछ के प्रयुक्त होने की संभाविता औरों से ज्यादा होती है। (अग्रेंजी भाषा के बारे में ही समझाया गया है परंतु उदाहरण के तौर पर अच्छा है) जैसे ई के आने की संभावना एफ से 40 गुना ज्यादा है। यदि में आपसे पूछू कि फलाँ पुस्तकालय की 1000 किताबों की अमुक पंक्ति का सत्रहवां अक्षर कौन सा है तो यदि आप ई का अंदाज लगाते है तो आपका उत्तर सही होने की संभावना एफ के मुकाबले 40 गुना होगी। इसलिए यदि अग्रेंजी के किसी पाठ में से कोई अक्षर आँख बंद करके चुना जाए तो इसका सही अनुमान लगाने में पूर्वज्ञानसे मदद मिलेगी।

यह दिखाया जा सकता है कि लोग इस प्रकार के ज्ञान का उपयोग करते है चाहे वे इस ज्ञान के प्रति सचेत न हों। (एक तरीका विस्तार में दिया गया है।) ऐसे पूर्वज्ञान का प्रभाव काफी होता है। हर दूसरा अक्षर निकाल देने पर भी अधिकांश अंग्रेजी शब्द पहचाने जा सकते हैं। इससे मालूम पड़ता है कि हमे शब्द में सारे अक्षरों को देखना नहीं होता। असंभाव्य विकल्पों को पहले ही निकाल देने से बहुत बचत होती है। पर्दे पर कुछ बेतरतीब शब्दों की एक झलक उनमें से दो–तीन को पहचानने के लिये काफी होती है। और बेतरतीब अक्षर दिखाने की बजाय शब्द दिखाये जाने पर ज्यादा अक्षर पहचाने जाते है।

पाठक भाषा के बारे में और बहुत कुछ जानते है। हम वाक्य में शब्दों के बारे में बढ़िया अनुमान लगा सकते हैं। कोई भी पुस्तक उठाकर उसके दाहिनी ओर के पृष्ठ की आखिरी दो पंक्तियाँ पढ़ लीजिए। अब अनुमान लगाईये कि अगले पृष्ठ पर पहला शब्द क्या होगा। आपका अनुमान हर बार सही नहीं होगा परन्तु आप हर बार ऐसा सोचेंगे जो संभव है। जरुरी यह भी नही कि बिल्कुल सही अनुमान लगाया जाये परन्तु असंभाव्य विकल्पों की छटाई की जाए। हालाँकि अँग्रेजी भाषा में कोई भी 50000 या उससे भी ज्यादा शब्दों में से चयन कर सकता है परन्तु साँख्यिकीय विश्लेषणों ने यह साबित कर दिया है कि एक शब्द विशेष लिखते समय उसके 250 से ज्यादा विकल्प नहीं होते। ठीक किस शब्द से अब सामना होने वाला है, यह अनुमान लगाना पांठक के लिये कतई जरुरी नही और न ही उन्हे आगे के कई शब्दों की भविष्यवाणी करना है। यदि वे कई हजारों विकल्पों को घटाकर दो–एक सौ कर लेते हैं तो वे अपने दिमाग का बोझ काफी हल्का कर लेंगे। पर्दे के प्रयोग से हम फिर दिखाएंगे कि इसमें कितनी बचत होती है। यदि पर्दे पर दिखाए गए 30 अक्षरों से एक वाक्य बना है तो एक ही झलक में दर्शक सारे के सारे देख पाएगा। कई सारे प्रयोगों से यह साबित हुआ है कि अँग्रेजी भाषा के संभावित क्रम से मेल खाते अक्षरों और शब्दों के क्रम को पहचानना ज्यादा सही तरह से, तेजी से और कम दृश्य जानकारी से हो पाता है। प्रयोग न सिर्फ यह दिखाते है कि बच्चों सहित सभी व्यक्तियों के पास भाषा का ऐसा ज्ञान होता है जिससे उन्हें अग्रिम रुप से अंसभाव्य विकल्पों को हटाने में मदद मिलती है बल्कि यह भी कि उन्हे अपने इस ज्ञान का पता हो न हो, वे बगैर किसी के निर्देश के इसका उपयोग करते हैं। परंतु असंभाव्य विकल्पों को पहले ही अस्वीकार कर देना मानव दिमाग का एक गुण है।

जो बच्चा गल्ती करने से डरता है वह आगे चल कर रुक कर पढ़ने वाला और अक्षम पाठक बनेगा। जिसे पढ़ने में दिक्कत हो रही हो उसके लिए गति प्राप्त करना और हरेक शब्द को सही तौर पर पहचान कर आगे बढ़ना, सबसे बेकार तरीका होगा।

पूर्वानुमान के फायदे

मेरा तर्क है कि पूर्वानुमान असंभाव्य विकल्पों को हटाकर अनिश्चितता कम करने में मदद मिलती है। हम बगैर पूर्व अपेक्षा के निर्णय नहीं लेते, ऐसा करना समय की बर्बादी होगी। इसके बजाय हम मात्र इतनी

जानकारी तलाशते हैं जिससे संभव विकल्पों के बीच चुनाव कर सकें। उससे इन चार बाधाओं को पार करने में मदद मिली है जिनकी मैंने पहले बात की थी। इसके अलावा पूर्वानुमान के और भी फायदे हैं। अधिकाँश शब्दों के कई अर्थ होते है परन्तु जब हम पूर्वानुमान करते हैं तो हम उस शब्द के सिर्फ एक हीं अर्थ की तलाश में होते है।

यह तो स्पष्ट है कि पूर्वानुमान से पढ़ने की गति बढ़ेगी बढ़ेगी और इससे दिमाग की धीमी गति की सीमा भी पार हो जाएगी। जितने कम विकल्पों पर आप विचार करेंगे, उतना ही तेज पढ़ पाएंगे। पूर्वानुमान आधारित पठन से दिमाग को असंभव विकल्पों पर समय नहीं खपाना पड़ता। छोटी अवधि की याद्दाश्त की सीमित क्षमता का हल इस प्रकार हो जाता है कि आप हर बार उसमें छोटी–छोटी अर्थपूर्ण इकाईयाँ ही डालते हैं। इसके बजाय कि इस याद्दाश्त को कुछेक असंगत अक्षरों से भर दिया जाए, यह बेहतर होगा कि इसमें उतने ही शब्द डाले जाएं या और भी बेहतर होग कि उसमें दो या तीन वाक्यों के अर्थ रहें। वास्तव में पूर्वानुमान इसी स्तर पर कारगर होता है, अर्थ का अनुमान लगाना, शब्द या अक्षर की बनिस्बत आसान है।

एक बोनस फायदा यह है कि पढ़ने वाला अर्थ के लिए पढ़ता है। शुरु करने से पहले ही पढ़ना सार्थक बन जाता है। अर्थहीन अक्षरों और शब्दों के जंगल में इस आज्ञा से भटकना कि अन्ततः समझ की किरण फूटेगी, से बेहतर है कि शरुआत ही अर्थ की खोज से की जाए। यदि पाठ में कोई अर्थ होगा, तो पूर्वानुमान वाला पाठक ही इसे पाएगा।

एक आखिरी व्यवहारिक फायदा यह है कि पूर्वानुमान आधारित पढ़ने में इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता कि पढ़ने वाले की भाषा, लेखक की भाषा से थोड़ी–बहुत अलग है।

अधिकाँश बच्चे वह भाषा समझ लेते है जो शायद वे बोल या लिख न पाएं। फिर भी स्कूल में बच्चे की भाषा का मूल्याँकन उसके बोलने या लिखने पर आधारित होता है। बच्चे से यह अपेक्षा करना उचित नहीं कि वे शब्दों को अर्थ समझने की पहली सीढ़ी समझें क्योंकि हो सकता है वे उस अर्थ के लिये उन शब्दों को इस्तेमाल ही न करते हों। परन्तु पूर्वानुमान में एक से एक की संगति जरुरी नहीं है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ेगा यदि बच्चा सोचे "हम नहीं जात" जबकि लेखक ने लिखा हो "हम नही जाते है।"

एक बच्चा जब गल्ती करता है तो शिक्षक या बाकी कक्षा को उसे तत्काल ठीक करने की जरुरत नही है। शायद बच्चा अगले वाक्य तक खुद ही सुधार कर ले, जो कि वास्तव में पढ़ने के लिए ज्यादा कीमती हुनर होगा।

कक्षा में पूर्वानुमान

यदि बच्चों को पढ़ने के लिए अनिवार्य पूर्वानुमान के काबिल बनना है तो दो शर्तें पूरी होनी चाहिए। पहली शर्त है कि जिस सामग्री पूर्ण होंनी चाहिए, अन्यथा उनके लिए पूर्वानुमान कोई अर्थ नही रह जाएगा। अर्थपूर्ण का उल्टा बकवास है और जो बकवास है उसका पूर्वानुमान नहीं किा जा सकता। कोई भी सामग्री या गतिविधि जो बच्चे के लिये सार्थक नहीं होती, मुश्किल होगी।

परन्तु सामग्री और गतिविधियों की सार्थकता ही पर्याप्त नही हैं। बच्चों को यह भी विश्वास होना चाहिए कि वे अनुमान लगाने और अपने पूर्वज्ञान का उपयोग करने के लिये स्वतंत्र है। पूर्वानुमान के साथ हमेशा गलती करने की संभावना होती है परन्तु यदि जो पाठक कभी गलती नही करते वे सक्षम रुप से नहीं पढ़ रहे हैं। वे जितनी जरुरी है उससे कही अधिक जानकारी को प्रोसेस कर रहे हैं। जो बच्चा गलती करने से डरता है वह आगे चलकर रुक–रुककर पढ़ने वाला और अक्षम पाठक बनेगा। जिसे पढ़ने में दिक्कत हो रही है उसके लिए गति प्राप्त करना और हरेक शब्द को सही तौर पर पहचान कर आगे बढ़ना सबसे बेकार तरीका होगा।...

यह धारणा है कि पूर्वानुमान को प्रोत्साहन मिलना चाहिए कई शिक्षकों की चिन्ता का कारण बनती है। उन्हे लगता है कि जैसे गलतियों का गुणगान किया जा रहा है। परन्तु पूर्वानुमान और धुल में लट्ठ मारने वाला बालक वह है जो वही हासिल करने की कोशिश करता है जो उसके शिक्षक उससे चाहते है।

वह हर शब्द को पढ़ने की कोशिश करता है चाहे उनसे अर्थ कुछ न निकले। कम पठन क्षमता वाले बड़े बच्चों का एक लक्षण यह होता है कि वे इस बात में कोई दिलचस्पी या अपेक्षा नही रखते कि पाठ का कोई अर्थ भी हो सकता है। वे तो किसी भी कीमत पर शब्दों को सही पढ़ने के लिये कमर कस लेते हैं।

फिर, सटीकता को जरुरत से ज्यादा मूल्य दिया जाता है। पढ़ने के दौरान कोई भी गलती सिर्फ दो प्रकार की हो सकती है: या नहीं पड़ेगा। यदि अर्थ पर कोई असर नहीं पड़ता जैसे यदि बच्चा 'अन्दर' की जगह 'भीतर' पढ़ता है, तो काई अन्तर नहीं पड़ता। तब चिन्ता की कोई बात नहीं। परन्तु यदि अर्थ पर असर पड़ता है जैसे यदि बच्चा 'अन्दर' की जगह 'अन्तर' पढ़ता है, तो पाठक अपने आप समय आने पर गड़बड़ी देख लेगा क्योंकि वह अर्थ पर ध्यान दे रहा है। जो बच्चा अर्थ की गलतियों को चूक जाता है वह अर्थ के लिए पढ़ने वाला नहीं बल्कि शब्दशः पढ़ने वाला बच्चा ही हो सकता है।

तब पूर्वानुमान को कैसे बढ़ाएँ? कुछ तो बहुत आसान तकनीकें है जैसे बच्चे को कठिन शब्द का अनुमान करने को प्रोत्साहित करना या पढ़ने के खेल जिसमें शिक्षक अचानक रुक जाते हैं या बीच में कोई शब्द

छोड़ देते हैं या कभी जानबूझकर गलती कर देते हैं आदि।

परन्तु मेरे ख्याल से ज्यादा महत्वपूर्ण है वि पूर्वानुमान को निरुत्साहित न किया जाए। पूर्वानुमान भाषा का प्राकृतिक पहलू है। किसी दिलचस्प कहानी में अपरिचित शब्द आ जाने पर बच्चों की रणनीति वही होती है जो किसी धाराप्रवाह व्यस्क की: पहले उस शब्द को छोड़ देना, फिर अनुमान लगाना। यदि उन्हे धाराप्रवाह पाठक बनना है तो उन्हें देर सबेर अनुमान लगाना ही होगा। फीडबैक किसी भी शिक्षक प्रक्रिय का अभिन्न अंग है परन्तु यह कभी बहुत जल्दी या बहुत बार देर से दिया जाता है। कोई बच्चा जब किसी शब्द पर अटकता है तो इसका मतलब यह नहीं कि वह चाहता है कि शिक्षक या बाकी कक्षा उसे तुरन्त बता दे कि वह शब्द क्या है पर यह देख रह हो कि बाकी वाक्य से उसका क्या संबंध है। एक बच्चा जब 'गलती' करता है तो शिक्षक या बाकी कक्षा को उसे तत्काल ठीक करने की जरुरत नही है। शायद बच्चा अगले वाक्य तक खुद ही सुधार कर ले जो कि वास्तव में पढ़ने के लिये ज्यादा कीमतीं हुनर होगा। अर्थ के लिए पढ़ने का सबसे बड़ा फायदा तो यह है कि इसमें फीडबैक आपोआप मिलता है। गलतियाँ स्वतः स्पष्ट दिखने लगती हैं।

पूर्वानुमान करने में सबसे विकट बाधा चिंता है। एक बच्चा जो गलती करने से डरता है, वह स्पष्टः चिन्ताग्रस्त है और वह पूर्वानुमान के जोखिम से बचेगा। पठन समस्या वाला व्यक्ति चिंताग्रस्त रहेगा, खासकर उस स्थिति में जब उसे मालूम हो कि उसका मूल्यांकन किया जा रहा है।

पूर्वानुमान, पढ़ने के लिये सब कुछ नहीं है। दूसरी महत्वपूर्ण चीजें हैं छोटी अवधि याद्दाश्त का सक्षम उपयोग, दृश्य संकेतो का न्यूनतम उपयोग, पढ़ने की सामग्री के आधार पर उचित गति का निर्धारण और अपरिचित शब्दों को संदर्भ के आधार पर समझ पाने की क्षमता। किन्तु ये सारे हुनर पढ़ने के अभ्यास से ही आते है, इन्हे सिखाया नहीं जाता बल्कि विकसित किया जाता है। (दरअसल, कई शिक्षकों को यह मालूम भी नहीं है कि इन जीचों चीज़ों का पढ़ने में किस हद तक समावेश है) पूर्वानुमान का लाभ यह है कि इससे सफल व अर्थपूर्ण पढ़ने में सुविधा होती है और जैसा कि हम देख-चुके है कि पढ़ने के महत्वपूर्ण हुनर पढ़कर ही सीखे जा सकते है।

पढ़कर पढ़ना सीखना

शैक्षिक विकास की किस अवस्था में कहा जा सकता है कि बच्चे ने पढ़ना शुरु कर दिया है? बच्चा औपचारिक रुप से पढ़ना शुरु करे, उससे पहले ही क्या पढ़ने की बुनियाद देखी जा सकती है?

मैने अन्य लेखों में यह तर्क दिया है कि बच्चे पढ़ना पढ़कर ही सीखते है और शिक्षक का पहला सरोकार बच्चे को अधिक से अधिक पढ़कर सुनाना होना चाहिये, इससे पहले कि वे स्वयं आगे बढ़ सके। यदा–कदा इस पर यह आपत्ति गई है कि बच्चे पढ़ना तब तक शुरु नहीं कर सकते जब तक कि इस कम के लिये आवश्यक कुछ प्रक्रियाएं न सीख लें। आम तौर पर इसका मतलब ध्वनि के नियमों से होता है। कभी–कभी यह आपत्ति भी की जाती है कि "अर्थपूर्ण पठन के लिये जरुरी है कि बच्चा कुछ शब्द साथ–साथ रख कर वाक्य पढ़ने के काबिल हो जाए। और कुछ शिक्षकों व सिद्धान्तकारों को भय है कि यदि शुरुआती पठन बहुत आसान बना दिया गया, तो बच्चे बौद्धिक रुप से आलसी हो जाएंगे और न्यूनतम प्रगति में ही खुश रहेंगे।

इन सारे मुद्दो पर मुझे कुछ समझ बनाने का मौका तब मिला जब मैं पठन निर्देश के विषय पर एक टेलीविजन फिल्म के एक भाग के निर्माण से जुड़ा था। जैसा कि शिक्षक शोध और छोटे बच्चों की फिल्मों के साथ होता है सबसे ज्याद शिक्षाप्रद घटनाएं तब हुई जब बच्चा कुछ अनपेक्षित और काम से हटकर कुछ कर रहा था। कुछ दिलचस्प घटनाएं तब हुई जब कैमरा नहीं चल रहा था। इसीलिये एक अनौपचारिक रपट अनुचित नही होगी। चूकि अनुभव बहुत कम समय का है इसलिये ज्यादा सामान्य सिद्धांन्त का दावा करना गलत होगा। बहरहाल जो निष्कर्ष मिले उनसे ज़्यादा औपचारिक शोध की आवश्यकता तो दिखती ही है।

मामले का अध्ययन

उद्देश्य स्पष्ट रुप से परिभाषित किये गए थे। मुझे "पढ़ना सीखने की दहलीज" पर खड़े एक बच्चे को सुपरमार्केट ले जाकर यह दिखाना था बच्चों की दुनिया अंर्थपर्णू छापे से भरपूर हो सकती है बच्चे न सिर्फ यह जानते है कि कैसे सीखें, बल्कि यदि उनके आसपास की स्थिति में सीखने की संभावना पूरी हो जाएं, तो वे सीखने के लिए कुछ और ढूंढने निकल पडेंगे। बच्चा था मैथ्यू, उम्र 3.5 साल। टोरंटो (कनाडा) शहर के एक उपनगर के निवासी मध्यम वर्गीय परिवार के दो बच्चों में से वह बड़ा है। इस पृष्ठभूमि के कारण संदेह न करें कि उसकी स्वाभावित जिज्ञासा या सीखने की क्षमता उसकी उम्र के किसी लड़के या लड़की से भिन्न होगी। मैथ्यू के माता पिता– दोनों काम करते हैं और मैथ्यू अन्य बच्चों से ज्यादा टेलीविजन देखता है। किताबों में उसकी रुचि मात्र देखने या पढ़कर सुनाई जाने में है।

मैथ्यू के परिवेश मुदित भाषा की समृद्धता दिखाने के लिये हमने उसे पहले सुपर मार्केट में भटकने दिया और कैमरे की आंख के स्तर पर रखकर उसका पीछा किया। इस दृष्टिकोण से मैथ्यू छापे से घिरा हुआ था जो कि वास्तव में (पर मुहावरे में नही) उसके सिर के ऊपर थे। उसके चारों तरफ शब्द थे, सभी

अर्थपूर्ण थे, परन्तु अभी पहचानने लायक नहीं थे। वह जानता था कि सारे शब्दों को कुछ न कुछ मतलब है और वह लेबल देखकर एक प्रकार के सॉस को दूसरे से अलग कर सकता था। यह मैथ्यू ने कहॉ से सीखा?

संभवतः टेलीविजन विज्ञापनों से जो कि बच्चो के लिये पठन संबंधी जानकरी का अपार स्त्रोत है क्योंकि विज्ञापनों में शब्दों को कई बार सार्थक रुप से लिखित और बोल दोनों तरह से पेश किया जाता है। बच्चे का सामना जितनी ज्यादा लिखित भाषा से होता है, यह एक वयस्क के लिए आश्चर्य का विषय होगा जो कि स्वयं इस पर सिर्फ सरसरी तौर पर ही ध्यान देते है। कितने ही वयस्क पाठकों ने छापे की इस अति की उपेक्षा करना सीख लिया है जबकि एक खोजी, सीखने वाले बच्चो के लिये यह बहुत ही उत्साहवर्धक स्थिति होती है। इससे मालूम होता है कि एक बच्चे की दुनिया सार्थक लिखित भाषा से उसी प्रकार परिपूर्ण हो सकती हो सकती है जैसे कि घर में सार्थक बोली गई भाषा से यह आम तौर पर माना जाता है कि यह बोलना सीखने के लिये अनिवार्य परिस्थिति है। कुछ शब्द ऐसे थे जिन्हे मैथ्यू देखते ही पढ़ सकता था और कुछ ऐसे थे जो उसने गलत पढ़े, जेसे कॉर्न फलेक्स जबकि उसके हाथ में जो डिब्बा था उस पर ब्रांड का नाम लिखा था। परन्तु वह काफी अच्छे से जानता था कि लेवल पर क्या लिखा होना चाहिए इससे संकेत मिलता है कि कितनी अच्छी तरह से वह छापे का कार्य जानता है और यह कि वह शब्द को पहचानने से पहले ही उसे एक संभावित अर्थ दे सकता था।

एक बच्चे की दुनिया सार्थक लिखित भाषा से उसी प्रकार परिपूर्ण हो सकती है जैसे कि घर बोली गयी सार्थक भाषा से – एक छोटा बच्चा मुद्रित भाषा में डूब सकता है और हमारा बच्चा तो निश्चित रुप से जानता है कि इससे अर्थ कैसे निकालना। – बच्चे ऐसी स्थिति में ज्यादा समय नहीं टिकेंगे जिसमें कुछ सीखने को हो।

एक रोचक बात यह है कि मैथ्यू कुछ ऐसे शब्द नहीं पहचान पाया जिन्हे वह ध्वनि के आधार पर जानता था। जब पूछा गया कि उसने Stop का निशान सही कैसे पहचाना तो उसका कहना था क्योंकि उसके हिज्जे है P-O-T-S जब जब गली के नाम का निशान दिखाकर पूछा गया तो उसने अपनी गली का नाम बता दिया जिसका उस बोर्ड पर लिखे शब्द से कोई संबंध नहीं था। क्या इसका मतलब यह कि मैथ्यु पढ़ने के बारे में कुछ नहीं जानता या यह कि कुछ ही समय में वह ऐसे संकेत जुटाना सीख जाएगा जिनसे एक नाम को दूसरे नाम से अलग पहचाना जा सके क्योंकि अभी भी वह यह तो जानता ही है कि एक शब्द विशेष के लिये कौन से विकल्प संभव है?

डिपार्टमेंट स्टोर में मैथ्यू को एक ग्रीटिंग कार्ड खरीदने के लिए ले जाया गया। जब पूछा गया कि उस विभाग के बोर्ड पर क्या लिखा है जो उसने सही बताया कार्ड वह चालाकी कर रहा था कि वह पढ़ने के एक पहलू का प्रदर्शन कर रहा था, हालांकि उस शब्द को किसी और संदर्भ में न पहचान पाता। इसी प्रकार उसने खिलौना विभाग का नाम भी सही बताया ,हालांकि उसकी दिलचस्पी अक्षर बताने में नहीं थी। वह उसे मालूम थे और इसलिए उबाउ थे। लगेज विभाग में एब ज्ञानवर्धक गलत संकेत हुआ। मैथ्यू ने

अपने आसपास एक नजर डाली और की बोर्ड केसेस लिखा है। यदि वह शब्द को ध्वनियों के जरिये कहने की कोशिश करता, तो क्या बेहतर होता? इस प्रश्न का उत्तर तब मिला जब उससे footwear विभाग के लेबल के बारे में पूछा गया। कैमरा चल रहा था। स्थिति की गंभीरता को देखते हुए अक्षर–दर–अक्षर और अर्थ, दोनों तरीके लागू किये। उसने बोर्ड और उसके संदर्भ को ध्यान से देखा और कहा " या तो इस पर Eff-Off लिखा है या Shoes" ।

अब तक का सार यह है कि, मैथ्यू नें वे दोनों बाते सामने ला दी थी जो कि हम लाना चाहते थे। एक छोटा बच्चा मुद्रित भाषा में डूब सकता है और हमारा बच्चा तो निश्चित रुप से जानता है कि इससे अर्थ कैसे निकालना। वह जानता था कि कैसे सीखना। उसे किसी ने नहीं बताया था कि शब्द पहचानने के लिये संदर्भ से संकेत लेने चाहिए। यहाँ इस बात पर विचार करना उचित होग कि मैथ्यू कि उम्र का एक बच्चा डिपार्टमेंट स्टोर के बारे में कितना कुछ सीख सकता था, दुनिया की तो बात ही छोड़िये। वह उसकी संरचना से परिचित था ,जानता था कि कहाँ घुस सकते है कहॉ नही चीजों को किस तरह जमाया जाता है कि उनकी कीमत अदा करनी होती है, कहॉ पैसा देना, कैसे देना और चिल्लर के लिये इंतजार करना, वगैरह वह एक वयस्क के बराबर जानता था। उसे सरे निर्देश कौन देता रहा था?

जो वयस्क उसके पीछे–पीछे चल रहे था उन्हे अभी दो सबक और सीखना थे। दोनों में कहा जा सकता था कि मैथ्यू उद्दण्ड व्यवहार कर रहा था। वह जो करना चाहता था वह नही कर रहा था परन्तु उसका व्यवहार शिक्षादायक था।

पहली घटना थी जिसमें मैथ्यू ने अरुचि से वह किताब एक तरफ फेंक दी जिसको वह मिनटों पहले बड़े ध्यान से देख रहा था। हमने निष्कर्ष निकाला कि बच्चे ऐसी स्थिति में ज्याद समय नहीं टिकेंगे जिसमे कुछ सीखने को न हो। उसमें जल्दी ही समझ लिया था कि इस किताब के अध्यययन से और कुछ हासिल होने वाला नहीं है। परन्तु जब हमने इस स्थिति को कैमरे में उतारने के लिये वापस जमाना चाहा, तो मैथ्यू ने दृढ़ता से उसे किताब को छोड़ने से इंकार कर दिया। कैमरा चलता रहा और मैथ्यु बगैर किसी बात से विचलित हुए, उस किताब में डूबा लेटा रहा। उसने कुछ नया ढूंढ लिया था– उस किताब के कुछ पन्नों में बीच में छेद था और उनके उंगली फसाकर उसे खोलने का नया तरीका उसे मिल गया था। वह यह देख रहा था कि क्या हर पन्ने पर ऐसा छेद है। अब वह यह बात नहीं बता रहा था कि यदि कुछ सीखने को नहीं है तो बच्चा उस पर ध्यान नही देगा बल्कि वह यह दर्शा रहा था कि यदि वह कुछ सीखना चाहता है जो उसे ऐसा करने से रोका नहीं जा सकता।

बच्चे न सिर्फ यह जानते है कि कैसे सीखें बल्कि यदि उनके आसपास की स्थिति में सीखने की संभावना पूरी हो जाए तो वे सीखने के लिए कुछ और ढूंढने निकल पड़ेंगे। – टेलीविजन विज्ञापन बच्चों के लिए पठन सम्बन्धी जानकारी का अपार स्त्रोत है क्योंकि विज्ञापनों में शब्दों को कई बार सार्थक रुप से लिखित और बोलकर,दोनों से पेश किया जाता है।

आखिर में मैथ्यू ने एक किताब उठाई जिससे वह परिचित था– "खुरचने की किताब" जिसमें फलों और दूसरी चीजों के चित्र होते है जिनको खुरचने से उस वस्तु की खुशबू आती है। कैमरा चल रहा था मैं मैथ्यू का ध्यान बँटाना चाहता था क्योंकि फिल्म के इस हिस्से से लग सकता था कि हम खुशबू वाली किताबों की वकालत कर रहे हैं। परंतु मैथ्यू को लगा कि मैं इस बात पर शक कर रहा हूँ कि चित्र में से सचमुच खुशबू आती है। फिल्म चलते में ही उसने मुझसे नाक नीची करके सूँघने को बाध्य किया। उसने क्या दर्शाया, सिवाय इसके कि बच्चों में सार्वजनिक स्थानों पर वयस्कों को शर्मिदा करने की आदत होती है ? उसने दिखाया कि बच्चों के लिए सीखना एक जीवन्त अनुभव होता है और इसमें सबको शामिल लेना चाहिए। वह मुझे कुछ सीखने के संतोष से वंचित नहीं रखना चाहता था।

निष्कर्ष

इस रपट की शुरूआत में मैंने कहा था कि मेरे ख्याल में इस संक्षिप्त अध्ययन से पाँच मुद्दों पर कुछ लिखा जा सकता है। पहला है कि बच्चे संभवतः तभी पढ़ने की शुरूआत कर चुके होते हैं जब वे सार्थक रूप में छापे के प्रति सचेत होते हैं और दूसरा कि जब भी बच्चे छापे का मतलब निकालने के लिए जूझते हैं तो पढ़ने की शुरूआत दिखती है, जो कि वास्तव में शब्द पहचानने की काबिलियत में पहले की बात है।

तीसरा, इस प्रारंभिक अवस्था में पठन की औपचारिक क्रियाविधि न सिर्फ अनावश्यक है बल्कि बाधक भी हो सकती है। यह तो बच्चे की छापे से मतलब निकालने की काबिलियत है जो उसे क्रिया विधि का उपयोग करने में सक्षम बनाएगी। चौथा, अर्थपूर्ण होने के लिये शब्दों का वाक्य में होना जरूरी नहीं है, उन्हें सिर्फ सार्थक संदर्भ में होना चाहिए। शब्दों को अर्थ तो पाठक लोग देते है और अंत में हमेशा यह भय निराधार है कि वयस्कों से बहुत सहायता मिलने से बच्चे की सीखने की क्षमता दब जाएगी। यदि बच्चे किसी पाठ को समझ गए हैं और अब उसमें उनके लिए सीखने को कुछ नहीं है तो वे ऊब जाएँगे और खुद ही आगे बढ़ना चाहेंगे। परन्तु वे तब भी ऊब जाएंगे जब वे कुछ भी नहीं सीख पा रहे हों या उन्हें किसी काम का मतलब पल्ले नहीं पड़ रहा हो। अतः हमें इन दो संभव कारणों को पहचानना सीखना होगा।

संक्षेप में, मेरे अध्ययन से मुझे मालूम पड़ा कि बच्चे पढ़ने के बारे में वयस्कों की मदद और जानकारी के बिना ही काफी कुछ सीख लेते हैं। यदि वयस्कों को पढ़ने के बारे में कुछ सीखना है, तो उन्हें बच्चों की मदद लेनी ही होगी।

मतलब पढ़ने का और पढ़ने के निर्देशों का

पढ़ना सीखने से पहले बच्चों में दो बुनियादी समझ होना आवश्यक है। ये दोनो बातें पढने के बारे मे शोध साहित्य में कभी कभार ही चर्चित होती है और पढ़ने के निर्देशों में भी उपेक्षित रहती है। पढने के निर्देश तो इन्हे उन बच्चो में भी दबा देते है जिन्होनें किसी प्रकार से इन्हें हासिल कर लिया हो। बिना इन दो बातों के पढने के निर्देश बच्चो की समझ से परे रहेगें और इसका कुप्रभाव यह होगा कि पढ़ना बकवास हो जाएगा। ये दो बुनियादी बाते है – (1) कि छापा अर्थ पूर्ण होता है और (2) कि लिखित भाषा बोलचाल की भाषा से भिन्न है। मैं इन दोनो की अलग अलग चर्चा करूंगा और बताउंगा कि ये क्यों अनिवार्य है, इन्हें कैसे हासिल किया जाता है और कैसे इन्हें नजर अंदाज किया जा सकता है या कैसे पठन निर्देश इनके मार्ग में रोडा बन सकते है।

बात 1 : छापा अर्थ पूर्ण है

बच्चे अक्सर बोलचाल की भाषा में डूबे होते है। घर में खेलते वक्त, दूरदर्शन देखते वक्त वगैरह परन्तु जब तक वे इसमें अर्थ न डाल पाएं, तब तक वे इस भाषा को न तो समझ पाऐंगे और न ही स्वंय व्यक्त कर पाऐगें। और यह (अर्थ) इस सूझबूझ के बगैर असंभव है कि बोलने की आवाजे अन्य क्रियाकलापों से अलहदा नहीं है बल्कि दुनिया के किया कलापो का कारण है। –" मतलब निकालने " से मेरा अर्थ है कि बच्चे भाषा की आवाजों को अपने अनुभव से जोड पाते है, भाषा का अर्थ तभी होता है जब आप इसमें अर्थ डाल पाऐं। दर असल, अर्थ की मेरी परिभाषा होगी " किसी कथन के साथ जोडा गया संदर्भ –

यह स्पष्ट नहीं है कि बच्चे कैसे और कब यह समझ हासिल कर लेते है कि भाषा – ध्वनि के भिन्न, कम, भिन्न– भिन्न अर्थो से संबंधित होती है और आवाजो के एक कम को अपनी मर्जी से किसी अन्य क्रम के स्थान पर नहीं रखा जा सकता। यह समझ कभी भी व्यक्त नहीं होती, मुझे पता नहीं कैसे वयस्क लोगों को भाषा की सार्थकता समझा सकते है या कैसे बच्चे स्वंय इस समझ को शब्दों में पिरो सकते है। मुझे लगता है कि वास्तव मे बच्चे भाषा को उसके कार्य से अलग करके नहीं सीखते । यही इस समझ की कुंजी है। बच्चे के लिए भाषा का हमेशा एक उपयोग होता है और अलग अलग उपयोग से ही बच्चो को उनमें निहित अंतरो के संकेत मिलते है। बच्चा जल्दी ही ऐसी आवाजों को अनसुना करना सीख लेता है जिनसे कोई अंतर नहीं पड़ता। बच्चों में एक बहुत कारगर तरीका होता है जिससे वे बेमतलब की आवाजो पर अपना समय बर्वाद करने से बच जाते है। यह तरीका है उबना । यदि किसी आवाज का नयापन शुरूआत में बच्चे का ध्यान आकर्षित करता भी है तो भी यदि यह आवाज कोई सार्थक अंतर पैदा नहीं करती तो जल्दी ही बच्चें इस पर ध्यान देना बंद कर देगें। इसीलिए वे भाषा बोलते हुए बडे होते है न कि पंखें की आवाज की नकल करते हुए।

बिलकुल इसी तरह की समझ कि मुद्रित पृष्ठ पर भिन्न सोद्देश्य है, सार्थक है लिखित भाषा

सीखने का भी आधार बनना चाहिए। जब तक बच्चे छपे हुए को उद्देश्यहीन बकवास समझेगे, तब तक उन्हें इस पर ध्यान देना अरूचिकर लगेगा, उबाऊ लगेगा।

बच्चे अक्षरों को ध्वनियों से जोड़–जोड़कर नहीं सीखेंगे क्योंकि एक तो इस काम में उन्हें कोई तथ्य नहीं दिखेगा और दूसरा कि भाषा इस तरह चलती भी नहीं है। मेरे ख्याल से भाषा का मतलब अक्षरों को ध्वनियों में बदलना नहीं है, बल्कि छापे में अर्थ डालना है। हिज्जों से उच्चारण कोई आसान काम नहीं है। अंग्रेजी भाषा में तो यह बहुत ही मुश्किल है। भाषा समझने का आधार है सार्थकता के जरिये पूर्वानुमान। एक बार दोहरा दूँ कि बच्चे को पढ़ना सीखने में अर्थ की मदद मिले, इससे पहले यह समझ बनना जरूरी है कि छापा अर्थपूर्ण है।

समझने में संदर्भ की भूमिका

इस संबंध में शोध से कुछ ज्यादा जानकारी नहीं मिली है, फिर भी यह एक उचित परिकल्पना लगती है कि बच्चे लिखित भाषा से इसी तरह घिरे हैं जिस तरह बोली भाषा से। यहाँ लिखित भाषा से तात्पर्य सारे विज्ञापनों सड़क पर चिन्हों, बस स्टैण्ड, रेल्वे स्टेशन आदि पर लगी सूचनाओं आदि से है। यह सारा लेखन अर्थपूर्ण है, इससे अंतर पड़ता है। साबुन के लेबल वाले डिब्बे में हम बिस्कुट होने की अपेक्षा नहीं करते।

प्रश्न यह है कि जो बच्चे अभी पढ़ नहीं सकते, क्या वे इस सारे लेखन पर ज्यादा ध्यान देते हैं ? मैंने अपने पिछले पर्चे में 3.5 साल के बच्चों का जिक्र किया था जो luggage या footwear जैसे शब्द पढ़ नहीं सकता था पर उसका कहना था कि पहले पर cases और दूसरे पर shoes लिखा है। यह बच्चा शब्द पढ़ना सीखने से बहुत पहले ही लेखन को अर्थ देना सीख गया था, उसे यह समझ थी कि लेखन में अंतर अर्थपूर्ण होते हैं।

मेरे विचार से यह समझ प्राप्त करने का एक ही तरीका है और वह है बच्चों को कुछ पढ़कर सुनाया जाना या उनका लेखन के प्रति अन्य लोगों की प्रतिक्रिया देखना मैं यहाँ किताब या कहानी पढ़ने की बात नहीं कर रहा हूँ। मैं बात कर रहा हूँ उन जगहों की जब बच्चा सुनता है कि "इस बोर्ड पर" रूकिये लिखा है" या" यह बस गाडरवारा जाएगी", आदि। टेलीविजन के विज्ञापन भी यही करते हैं। वे न सिर्फ बोलचाल और लिखित भाषा में उत्पादन का नाम, खासियत और सर्वोत्तम होना बताते हैं बल्कि उसको काम करते हुए भी दिखाते हैं। इन सब मामलों में खास बात यह है कि लेखन की अदलाबदली नहीं की जा सकती। लेखन का उस परिस्थिति से सीधा संबंध है जैसा कि घर पर बोलचाल की भाषा का है। एक बार लिखित भाषा के बारे में यह बुनियादी समझ आ गई, तो मुझे कोई कारण नहीं दिखता कि क्यों अब बच्चा स्वतः इस पर आगे न बढ़े जैसा कि उसने बोलने में किया था।

निर्देशों की प्रासंगिकता

मैं एक बार फिर जोर दे दूँ कि भाषा के किसी भी पहलू का मतलब निकालने के लिये बच्चे को इसका उद्देश्य मालूम होना चाहिये। इसमें निहित है न सिर्फ निर्देशों की विषय वस्तु अर्थात् बच्चों को जो सामग्री पढ़नी है वह न केवल समझ में आनी चाहिए, बल्कि उन्हें निर्देशों का उद्देश्य भी समझ में आना चाहिए। यह अक्सर होता नहीं है। अगले कुछ पैराग्राफ में मैं यह बताने की कोशिश करूँगा कि पठन निर्देशों के वे कौन से पहलू हैं जो बुनियादी रूप से समझ से परे हैं।

भाषा के किसी भी पहलू का मतलब निकालने के लिए बच्चे को इसका उद्देश्य मालूम होना चाहिए। इसमें निहित है न सिर्फ निर्देशों की विषय–वस्तु अर्थात् बच्चों को जो सामग्री पढ़नी है वह न केवल समझ में आनी चाहिए बल्कि उन्हें निर्देशों का उद्देश्य भी समझ में आना चाहिए।

एक पहलू है बोले हुए शब्दों को ध्वनि के टुकड़ों में बाँटना। बोला हुआ शब्द 'केला' किसी संदर्भ में सार्थक होता है परन्तु केला नहीं। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि बच्चे बोलने में इन इकाईयों को नहीं ढूँढ़ पाते। क्योंकि वास्तव में बोलचाल की भाषा में ऐसी इकाईयाँ होंती नहीं । इसमें तो अलग–अलग ध्वनियाँ और शब्द तक एक दूसरे में मिल जाते हैं। यह तो पक्की बात है कि कथनों को उनके हिस्सों में तोड़कर और वापस जोड़कर नहीं समझा जाता। श्रवण का पैनापन पढ़ने के लिए अनिवार्य नहीं है हालाँकि पठन निर्देशों को ग्रहण करने के लिए यह जरूरी हो सकता है।

समझ से परे एक और कवायद है, शब्दों को अक्षरों में विभक्त करना। मुद्रित शब्द 'केला' का कुछ संदर्भों में एक अर्थ है क्योंकि यह एक वास्तविक वस्तु का प्रतिनिधित्व करता है जिससे बच्चे सार्थक रूप से संपर्क कर पाते हैं किन्तु अक्षर क, ए, ल, आ का ऐसा कोई संबंध नहीं है। ये कुछ विशिष्ट लिखित प्रतीक हैं जिनका बच्चे के जीवन से कहीं–कोई संबंध नहीं है। जो बच्चे वर्णमाला जानते हैं वे अच्छे पाठक होते हैं परन्तु वर्णमाला सिखाने से एक खराब पाठक, अच्छे में नहीं बदल जाएगा। लगता तो यह है कि पढ़ने में प्रवाह आने पर ही वर्णमाला पर वर्चस्व बनता है।

पठन निर्देशों का तीसरा समस्यामूलक पहलू है अक्षरों को ध्वनियों के साथ जोड़ना जिनका दरअसल कोई संबंध नहीं है। थोड़ी कोशिश से शायद बच्चा इनका उच्चारण करना सीख जाएगा। परन्तु इससे बच्चे के पढ़ने में कोई फर्क नहीं पड़ेगा। हो सकता है कि बच्चा यह समझे कि पढ़ने का अर्थ है–तेज गति से निरर्थक आवाजें पैदा करना।

एक और समस्या है निर्देश में ऐसे जुमलों का प्रयोग जो वास्तव में पढ़ना सीखने के बाद ही समझ में आ सकते हैं। 'अक्षर' और 'शब्द' दो ऐसे ही शब्दों के उदाहरण हैं। बोलचाल की भाषा में शब्द का स्थान/परिभाषा काफी शंकास्पद है। बोलने के सामान्य प्रवाह के दौरान शब्दों को किसी विधि से

अलग–अलग नहीं किया जा सकता और भाषा वैज्ञानिक इस शब्द का प्रयोग न करना ही उचित समझते हैं। शब्द की सामान्य परिभाषा–"खाली (सफेद) स्थान से घिरे अक्षर" या "शब्दकोष में एक अलग इकाई" –स्पष्टतः लिखित भाषा पर ही लागू होती है। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि कई नौसिखिये वाक्य पैराग्राफ, या स्थान जैसे जुमलों का अर्थ नहीं समझते। इन जुमलों की परिभाषा बता देने से वे पाठक नहीं बन जाएंगे क्योंकि ये शब्द उनके लिए तब तक अर्थहीन रहेंगे जब तक कि पढ़ने न लगे।

और अन्त में, कई कवायदें और अभ्यास बेकार है। शिक्षक को कितना ही लगे कि अमुक अभ्यास सार्थक है, यदि बच्चे के लिए वह अस्पष्ट है तो उससे किसी सकारात्मक योगदान की अपेक्षा नहीं की जा सकती है। बच्चे प्रायः ऐसे उबाऊ, दोहराने बाले और बेमतलब के कामों में अंक प्राप्त करना सीख जाते हैं (और ये वही बच्चे होते हैं जो सक्षम पाठक हैं) परन्तु ये हुनर सिखाने से बच्चे पाठक नहीं बन जाते। दूसरी तरफ, कम अंक वाले बच्चे पिछड़ जाएंगे इसलिए नहीं कि उन पर संभावित खराब पाठक की छाप लग जाएगी बल्कि इसलिये कि वे इन्हीं निरर्थक, तोता रटन्त मुश्किल गतिविधियों को पढ़ने का आदर्श समझने लेगेंगे।

जो बच्चे वर्णमाला जानते हैं वे अच्छे पाठक होते हैं परन्तु वर्णमाला सिखाने से खराब पाठक अच्छे में नहीं बदल जाएगा। लगता तो यह है कि पढ़ने में प्रवाह आने पर ही वर्णमाला पर वर्चस्व बनता है।

जिस सामग्री से बच्चों को पढ़ना शुरू करना है, उनकी विषयवस्तु भी अबोध्य हो सकती है। आमतौर पर, अलग–अलग शब्द, अक्षरों से ज्यादा मायने नहीं रखते। शब्द एक सार्थक संदर्भ में (बशर्ते कि बच्चे को संदर्भ का उपयोग करने के लिये प्रोत्साहित किया जाए)–पूर्वानुमान, समझ और सीखने को बढ़ावा देते हैं। जरूरी नहीं कि इकलौते शब्द अर्थहीन हों। स्कूल के बाहर की दुनिया में अकेले शब्द जैसे चाय, किसी सिनेमा का नाम, आदि काफी मायने रखते हैं। परन्तु ये अकेले शब्द बगैर संदर्भ के नहीं होते हैं। वे जिस जगह पर लिखे होते हैं, उसी से उन्हें एक अर्थ व उद्देश्य मिल पाता है। जब अकेले शब्दों को उनके उद्देश्य से काटकर ब्लैकबोर्ड या कापी में एक सूची में लिखा जाता है या एक चित्र के नीचे लिख दिया जाता है तो यही बात नहीं हो पाती। स्कूल में सिखाए जाने वाले अधिकांश शब्द बहुअर्थी होते हैं और उनके कई व्याकरणीय प्रयोग होते हैं, जैसे जोड़, गिनती, रंग, वगैरह संज्ञा व क्रिया दोनों रूपों में प्रयुक्त हो सकते हैं। इसी प्रकार से 'खाली' सरीखे शब्द क्रिया और विशेषण दोनों हो सकते हैं।

दूसरी ओर, किसी शब्द को मात्र एक वाक्य में रख देने से वह सार्थक नहीं बन जाता। वह संभव है कि पूरा का पूरा वाक्य ही उद्देश्यहीन और निरर्थक हो (SAM THE FAT CAT SAT ON A FLAT MAT) ऐसा पूरा पैराग्राफ या 'कहानी' भी लिखी जा सकती है।

पठन निर्देशों में ऐसी अर्थहीनता के परिणामस्वरूप बच्चे–जो लगातार मतलब समझने के लिये जूझ रहे होते हैं–पूरी तौर पर भ्रमित हो सकते हैं। ज्यादा गम्भीर खतरा यह है कि जिन बच्चों को यह मालूम नहीं कि

लिखित भाषा में अर्थ होता है, वे शायद कभी मालूम न कर पाएँ और शायद जिन्हें समझ है उन पर यह दबाव पड़े कि वे गलत हैं। दुर्भाग्यवश, अधिकांश पठन निर्देश इस आधार पर बने हैं कि अर्थ, पाठक का प्रथम नहीं अंतिम सरोकार होना चाहिए।

ऐसे निर्देश नाकाम नहीं होते। हाय स्कूल के कई विद्यार्थी, जिन्हें पढ़ने में दिक्कत है, वास्तव में अपना पूरा जोर लगाकर शब्द को सही पढ़ने की कोशिश करते हैं और इसमें सफल भी हो जाते हैं। परन्तु वे प्रत्यक्ष रूप से अर्थ के प्रति कोई सरोकार नहीं दिखाते और न ही उन्हें यह ज्ञान होता है कि वे जो कुछ कर रहे हैं उसका अर्थ से कुछ लेना–देना भी है। इसके इलाज के लिये कई बार उनसे पढ़ना पूरी तरह छुड़वाकर वापिस उसी निरर्थक शुरूआत पर भेज दिया जाता है। ऐसी अर्थहीन सामग्री और गतिविधियों को कभी–कभी बुनियाद मजबूत करना कहते हैं।

बात 2 : लेखन, बोलने से अलग है

स्पष्ट तौर पर लिखित और बोलचाल की भाषा एक ही नहीं है। जब कोई भाषण कर्ता लिखित पर्चे को पढ़ रहा हो और वैसे ही बोल रहा हो तो पहचाँनना मुश्किल नहीं है। संभाषण और लेखन दो भिन्न भाषायें नहीं हैं, उनकी एक ही शब्दावली व व्याकरण रचना होती है। परन्तु दोनों में इनकार वितरण अलग–अलग होता है। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि इन दोनों में अन्तर दिखते हैं क्योंकि प्रायः इन दोनों को अलग–अलग उद्देश्य और अलग–अलग लोगों के लिये उपयोग किया जाता है। बोलचाल की भाषा अपने आप में भी इस आधार पर रहती है कि उसे किस उद्देश्य के लिए उपयोग किया जा रहा है और उपयोग करने वालों का आपसी रिश्ता क्या है। हालाँकि यह बताना मुश्किल है कि ठीक–ठीक क्यों व कैसे लिखित व सुस्पष्ट आधार है : बोलचाल की भाषा ने अपने आपको सुनने के लिए ढाल लिया है जबकि लिखित भाषा पढ़ी जाने के लिए ज्यादा उचित है।

शब्द की सामान्य परिभाषा 'खाली (सफेद) स्थान से घिरे अक्षर' या शब्दकोष में एक अलग इकाई'–स्पष्टतः लिखित भाषा पर ही लागू होती है। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि कई नौसिखिए वाक्य, पैराग्राफ या स्थान जैसे जुमलों की परिभाषा बता देने से वे पाठक नहीं बन जाएंगे क्योंकि ये शब्द उनके लिए तब तक अर्थहीन रहेंगे जब तक कि वे पढ़ने न लगें।

यह समझने के लिये कि इस प्रकार का विशिष्ट अनुकूलन कैसे हुआ होगा, यह देखना होगा कि दोनों भाषा स्वरूप ग्राहकों से किस तरह की माँग करते हैं। उदाहरण के लिए, यह तथ्य स्पष्ट है कि बोली (बोलचाल की भाषा) क्षणभंगुर है। शब्द बोलने के क्षण ही खत्म हो जाता है और वापस तभी पकड़ा जाता है, जबकि उसे या तो याददाश्त में सँजोया गया हो या बोलने वाला इसे दोहराने का कष्ट उठाए। इसके विपरीत

लिखित भाषा में कितनी सुगमता से आगे–पीछे जा सकते हैं। टेप रिकार्डिंग भी बोलचाल की भाषा में क्षणिकता की भरपाई नहीं कर सकती। लेखन मोटे तौर पर समय की सीमा में स्वतंत्र है। दूसरे शब्दों में (और यह एक बिना परखी परिकल्पना है कि) बोलचाल की भाषा छोटी अवधि की याददाश्त है। पढ़ते समय पाठक कई शब्दों पर एक साथ ध्यान दे सकता है, वह चुन सकता है कि वे कौन से शब्द होंगे, किस क्रम में होंगे और उन पर कितना समय लगाया जाएगा।

लिखित भाषा पाठक से एक और माँग करती है। यह छोटी अवधि याददाश्त से संबंधित नहीं है अपितु इस बात से संबंधित है कि हम भाषा से मतलब कैसे निकालते हैं। सवाल इस बात का है कि हम भाषा की जाँच कैसे करते हैं– हम कैसे तय करते हैं कि हम जो जानकारी ग्रहण कर रहे हैं, वह सही है। रोजमर्रा की बोलचाल में यह काफी आसान है। आसपास नजर घुमाइये। कोई भी कथन उस स्थिति से संबंधित होता है जिसमें वह कहा गया। परन्तु यदि हम पढ़े हुए को नहीं समझ पाते या विश्वास नहीं करते तो हमें अन्ततः उसका अर्थ उसी पाठ्य में खोजना होगा। लिखित भाषा में जाँच के लिये काफी कठिन और शायद अनूठा हुनर लगता है ताकि गलतियाँ न हो। तर्क को समझना, आंतरिक सामंजस्य को देखना और अमूर्त रूप से सोचना इस हुनर के हिस्से है। लिखित भाषा की इस आवश्यकता ने कई सिद्धान्त नवीसों को इस कदर प्रभावित किया है कि वे मानते हैं कि लेखन ने हमारे बौद्धिक क्षमता के खजाने में एक बिल्कुल नया तरीका जोड़ दिया है। यह दलील दी जा सकती है कि बोलचाल की भाषा भी उसी तरह अमूर्त, तर्कपूर्ण और अपने परिवेश से असंबंधित हो सकती है जैसे कि कोई वैज्ञानिक पर्चा। परन्तु ओल्सन का दावा है कि इस प्रकार की भाषा बोलना हमारे साक्षर होने का ही एक गौण परिणाम है। पढ़ने के अपने अनुभव के कारण ही हम अमूर्त संभाषण का मतलब निकाल पाते हैं, जो कि रोजमर्रा की बोलचाल की भाषा से काफी अलग और लिखित भाषा के ज्यादा करीब है।

समझ की जरूरत

जो बच्चे लिखित भाषा को वैसे ही पढ़ने की अपेक्षा रखते हैं जैसे कि वे बोलचाल की भाषा समझते हैं, उन्हें लेखन समझने में और फलस्वरूप पढ़ना सीखने में दिक्कत होगी। उनके सारे पूर्वानुमान गलत होंगे। इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता कि हम लिखित और बोलचाल की भाषा में अंतरों को ठीक से परिभाषित न कर पाएं। इस बात का भी कोई सबूत नहीं है कि बच्चों को लिखित भाषा के कायदे बता देना चाहिये। भाषा से अर्थ निकाल पाने और परिकल्पनाओं की जाँच करने की आम जरूरतें लिखित भाषा में उतनी ही आसानी से पूरी की जाएंगी जैसे कि बोलचाल में। अपने अंदरूनी सामंजस्य के कारण पाठ्य वस्तु ही फीडबैक देती है जैसे कि बोलचाल में आसपास का परिवेश। जब आप ऐसा कुछ पढ़ते हैं जिसे आप समझ रहे हैं तो कोई महत्वपूर्ण गलती होने पर आप जान पाएंगे और फिर से पढ़कर उस गलती को ढूँढ़ पाएंगे। बहरहाल,

इस सबसे बच्चे को कोई मदद नहीं मिलेगी यदि वह ऐसी भाषा पढ़ रहा है जो वास्तव में लिखित भाषा है ही नहीं या उसे यह बुनियादी समझ नहीं है कि लिखित भाषा और बोलचाल की भाषा अलग–अलग है।

दुर्भाग्यवश अधिकांश पठन–निर्देश इस आधार पर बने हैं कि अर्थ पाठक का प्रथम नहीं अंतिम सरोकार होना चाहिए। कोई विद्यार्थी, जिन्हें पढ़ने में दिक्कत है, वास्तव में अपना पूरा जोर लगा कर हर शब्द को सही पढ़ने की कोशिश करते हैं और इसमें सफल भी हो जाते हैं परन्तु वे प्रत्यक्ष रूप से अर्थ के प्रति कोई सरोकार नहीं दिखाते और न ही उन्हें यह भान होता है कि वे जो कुछ कर रहे हैं, उसका अर्थ से कुछ लेना देना भी है।

समझ हासिल करना

बच्चे यह समझ कैसे हासिल करें ? इसका एक जवाब है : वे लिखित भाषा का जोर से पढ़ा जाना सुनें। जब बच्चे से पूर्वानुमान असफल होते हैं क्योंकि वे बोलचाल की भाषा के ज्ञान पर आधारित है, तब यह समझ हासिल करने का एक मौका है। जब वे लिखित भाषा को सुनेंगे और समझेंगे तो अपनी परिकल्पना की जाँच करते हुए उन्हें लिखित भाषा को विशिष्ट लक्षणों के बारे में समझ बनाने का मौका भी मिलेगा। जब वे खुद ज्यादा पढ़ने लगेंगे तो वे अपनी इस समझ को पुख्ता कर सकेंगे।

जिन परिवारों में काफी पढ़ना होता है, उनके बच्चे बेहतर पाठक बनते हैं। मुझे ऐसा लगता है कि इसका कारण यह है कि उनको लिखित भाषा सुनने का ज्यादा अवसर मिलता है। बच्चे देखकर ही पढ़ना नहीं सीख सकते सिर्फ इसलिये कि उनके आसपास किताबों के ढेर हैं, या वे वयस्कों को पढ़ते देखते हैं। मुझे तो यही ज्यादा उचित लगता है कि ऐसे बच्चों के लिए लिखित भाषा सुनने की संभावनाएँ ज्यादा है।

यह तथ्य स्पष्ट है कि बोली क्षणभंगुर है। शब्द बोलने के क्षण ही खत्म हो जाता है और तभी वापस पकड़ा जा सकता है जब तक कि उसे या तो याददाश्त में संजोया गया हो या बोलने वाला इसे दोहराने का कष्ट उठायें। इसके विपरीत लिखित भाषा में उतनी सुगमता से आगे पीछे जा सकते हैं। लिखित भाषा पाठक से और मांग करती है। यह छोटी अवधि याददाश्त से संबंधित नहीं है अपितु इस बात से संबंधित है कि हम भाषा से मतलब कैसे निकालते हैं।

मेरे ख्याल से सच्ची कहानियाँ बच्चों को भाषा से सबसे ज्यादा परिचित कराती हैं। ये अखबार और पत्रिकाओं की सामयिक सामग्री से लेकर परी कथाओं, साहस कथाओं के पारम्परिक कथानकों तक हो सकती है। ये पारम्परिक कथाएँ बच्चों को आकर्षित करती है–शायद उनकी कुछ गहरी जरूरतों को पूरा करती हों। ये सारी कहानियाँ सचमुच लिखित भाषा है जो कि एक पारम्परिक माध्यम में एक उद्‌देश्य से

लिखी गई है। इस बात का कोई सबूत नहीं है कि बच्चों को इन जटिल कहानियों को समझने में (जब वे उनके लिये पढ़ी जाएँ) वयस्कों के जटिल संभाषण को समझने से ज्यादा दिक्कत होती है। दोनों मामलों में इस बात से कोई अंतर नहीं पड़ता कि भाषा के कई हिस्से समझ में न आएं जब तक कि श्रोता या पाठक को मोटे तौर पर कथानक समझ में आए और दिलचस्प बनी रहे। वास्तव में इसी तरह की सार्थक जटिलताओं से सम्पर्क में बच्चों को लिखित व बोलचाल की भाषा की प्रकृति के बारे में अपनी परिकल्पनाएँ विकसित करने और जांच का अवसर मिलता है। जिस तरह की सामग्री में स्कूली बच्चों का मन लगता है और जिससे वे सीख पाएंगे—वह प्रायः उनके पढ़ने के लिए बहुत कठिन होती है। यह शिक्षकों के सामने एक समस्या खड़ी करता है। इसका एक समाधान हो सकता है कि बच्चों को ऐसी सामग्री पढ़ने या सुनने में मदद की जाए परन्तु जो विकल्प चुना जाता है वह यह है कि ज्यादा आसान सामग्री ढूँढ़ी जाए या बनाई जाए, इस आशा में कि यह उन्हें सरल लगेगी और यदि यह खास तौर पर ढाली गई सामग्री भी उन्हें भ्रमित कर देती है तो यह माना जा सकता है कि खामी बच्चों और उनकी भाषा के विकास में हैं।

वास्तव में स्कूली पाठ्यपुस्तकों की भाषा अधिकांश बच्चों के लिये अपरिचित है। परन्तु इन हालातों की जड़ बच्चे की बोलचाल की भाषा या लिखित सामग्री से उसके सीमित सम्पर्क में नहीं है। इसका स्त्रोत स्कूल की कृत्रिम भाषा में होने की संभावना ज्यादा है। यह भाषा किसी भी लिखित या बोलचाल की भाषा से इतनी अलग है कि इसके लिए एक अलग ही समूह बनाना उचित होगा। 'स्कूली भाषा।' निश्चित ही ऐसे भाषा कई बच्चों के लिए पूर्वानुमान से परे होगी और उन्हें इसे समझने और उसके जरिये पढ़ना सीखने में बहुत दिक्कत होगी। बिडम्बना यह है कि निष्कर्ष निकाला जाता है कि लिखित भाषा मूलभूत रूप से बच्चों के लिए कठिन है और बेहतर होगा कि "बोलचाल की भाषा के लिखित रूप" से सीखे। ऐसी संकर नस्ल का स्रोत या तो किसी की अंतदृष्टि है कि बोलचाल की भाषा आखिर है क्या या (उससे भी बुरा) उस भाषा की एक बोली या "बच्चों की भाषा"। इनमें से किसी का भी विवरण भाषा विशेषज्ञों को चकरा सकता है। इसका परिणाम होगा एक ऐसी भाषा जो लिखित से काफी अलग होगी और जिसमें बोलचाल की भाषा के कई फायदे भी नहीं होगें क्योंकि इसे परिवेश से काटकर समझना होगा बच्चें इसको तोते की तरह दोहराना सीख सकते हैं पर मुझे नहीं लगता कि इससे वे पाठक बन जाऐंगे। और लिखित भाषा के बारे में उनकी जो भी समझ रही होगी, वह भी दब जाएगी सबसे बुरी बात तो यह है कि उनमें यह मान्यता बन जाएगी कि स्कूल में जो पहली लिखित सामग्री उन्होने देखी, उसी प्रकार की सामग्री आगे भी होगी। यह विश्वास जितना गलत है उतना ही हतोत्साहित करने वाला भी है।

जिन परिवारों में काफी पढ़ना होता है उनके बच्चे बेहतर पाठक बनते है—इसका कारण यह है कि उनको लिखित भाषा सुनने का ज्यादा अवसर मिलता है .... बच्चे देखकर ही पढ़ना

नहीं सीखते सिर्फ इसलिए कि उनके आस पास किताबों के ढेर है, या वे वयस्कों को पढ़ते देखते हैं।

निष्कर्ष :

मैनें दलील दी है कि पढ़ना सीखने की शुरूआत के लिए बच्चों में दो बुनियादी समझ होनी चाहिए। मैने यह भी कहा कि इन दो समझ के आधार पर वे लिखित भाषा से संबंधित अन्य समस्याओं को स्वंय हल कर लेगें बशर्ते कि कोई बाहरी भ्रम या बाधा उत्पन्न न की जाए। पहली बात कि उन्हें पूर्वानुमान करना चाहिए और भाषा को समझना चाहिए जिसके लिए उन्हें इसमें अर्थ डालना होगा। अधिकांश बच्चे बोलचाल की भाषा इसी तरह सीखते है और शायद इसीलिए सारे निर्देशों के बावजूद उनमें से कोई पढना भी सीख जाते है। निर्देशों पर इस सबका असर यह है कि बच्चे पढना पढकर ही सीखते है और शिक्षक की भूमिका पढना आसान बनाने की है । मेरा मतलब यह नहीं कि पढना आसान बनाने के लिए आसान साम्रगी का उपयोग हो। यह वास्तव में मुश्किल हो सकता है क्योंकि यह अप्रासंगिक और पूर्वानुमान से परे हो जा सकती है। मेरा सुझाव होगा कि बच्चों को वही सामग्री पढ़ने में मदद दी जाए जिसमें उनकी रूचि हो, चाहे ऐसी मदद शिक्षक द्वारा, किसी साथी द्वारा या टेपरिकार्डर से दी जाए, उन्हें सजा के डर के बगैर गलतियां करने की छूट देकर दी जाए, बच्चे जब चाहे मदद ले लेते है और जब नहीं चाहिए तो उपेक्षा कर देते है।

पढ़ने में असफलता के अवश्य ही कई कारण हो सकते है जिनमें प्रेरणाओं की कमी, अपेक्षा की कमी, असफलता का डर और स्कूल व शिक्षक के प्रति विद्वेष आदि प्रमुख है। परन्तु असफलता का यह अर्थ भी है कि पढना सीखने के अन्तर्गत जो कुछ होता है उसमें बच्चें को कोई तथ्य समझ में नहीं आता। पढना सीखने के प्रति बच्चे की निष्ठा, उसमें लगने वाली मेहनत और लाभ की गणना पर आधारित होती है। शिक्षक की समस्या मात्र पढ़ने को बोधगम्य बनाना ही नहीं है बल्कि यह सुनिश्चित करना भी है कि निर्देश हर बच्चे के लिए सार्थक और समझ में आ सकने वाले हो, जो बच्चे निर्देश समझ पाते है, उन्हें पढना सीख जाना चाहिए, जिन बच्चों का सामना बकवास से होगा, वे असफल होने को बाध्य है। सवाल इतना ही आसान और जटिल है।

फ्रेक स्मिथ के तीनो लेख

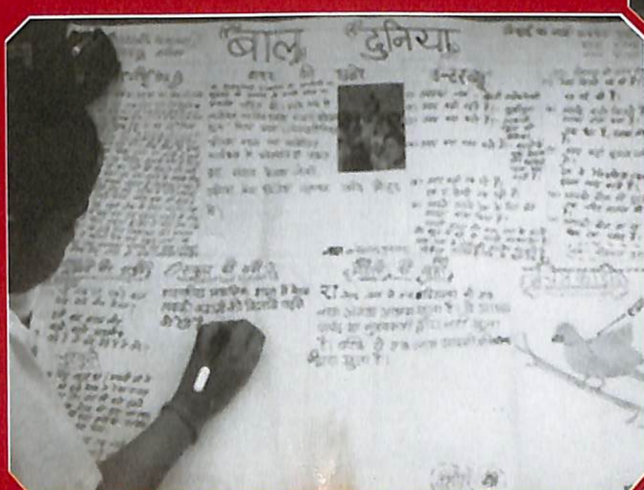
"फ्लश" पत्रिका जन फर 1990 से साभार

अनुवाद सुशील जोशी

अनुवाद संपादन एवं प्रस्तुति रमेश दवे






बाल दुनिया

